आशापूर्णा

अंहकार

अहंकार

राजा राममोहन राय प्रतिष्ठान,
कलकत्ता के सौजन्य से प्राप्त

लेखिका
आशापूर्णा देवी
अनुवादिका
अलका मुखोपाध्याय

नवल पुस्तक घर

ISBN NO. 81-88502-00-6

© लेखक

प्रकाशक : नवल पुस्तक घर
ई-13, कृष्णा नगर,
दिल्ली-51

मूल्य 150.00

प्रथम संस्करण : 2002

मुद्रक : पवन प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा
दिल्ली-32

कमल को सचमुच बड़ा अहंकार था।

शराब पीकर तेज गाड़ी चलाने के अहंकार में उसने गरीब मिस्त्री की लडकी को कुचल दिया। लड़की के दोनों पॉव बेकार हो गए और अन्ततः वह अस्पताल में ही मर गई।

पर इस घटना से कमल के अहंकार में कोई कमी नहीं हूई। लेकिन उसकी पत्नी रीता इन्सानियत के फेर में पड़कर अपने पति से क्यों बिगाड़ अपने पति से क्यों बिगाड़कर बैठी ?

अहंकार, गरीबी, मानवता और संवेदना जैसे शाश्वत मूल्यों को उजागर करती एक मार्मिक कथा।

उत्तेजित जनता न जाने कब से दीपक मैन्सन के सामने खड़ी तर्क-वितर्क कर रही थी। कुछ लोग गालियाँ दे रहे थे, कुछ रह-रहकर चिल्लाते हुए चेतावनी देते हुए धमकियाँ दे रहे थे।

उत्ताप बढ़ता जा रहा था, क्योंकि बहुतेरे फालतू लोग राह चलते रुककर तमाशा देखने लगते थे। जैसा कि भीड़ का हाल होता है, बिना जान-बूझे ही गाली-गलौज कर रहे थे। मकान का गेट पार कर सामने के लॉन पर लोग इकट्ठा होने लगे थे।

विशाल जनसमूह भले ही गेट के बाहर इकट्ठे हो, नीचे के सात नम्बर फ्लैट का दरवाजा ही उनका एकमात्र लक्ष्य है, यह बात सात नम्बर के दरवाजे को देखने से मालूम हो रहा था। इस बन्द दरवाजे के सामने खड़ी क्या कह रही है यह तो ठीक से पता नहीं लग रहा था, पर इतना जरूर मालूम पड़ रहा था कि वे कह रहे हैं, 'निकल साले...तेरी चमड़ी उधेड़ लूँ।

हालाँकि कोई चमड़ी उधेड़वाने बाहर नहीं आ रहा था और इसीलिए दरवाजे पर लात धक्के पड़ रहे थे। देखकर लग रहा था दीपक मैन्सन का यह मजबूत दरवाजा कहीं टूट न जाए, और यह उत्तेजित जनता बलपूर्वक भीतर घुसकर सब कुछ तहस-नहस कर देगी। क्या पता चमड़ी उधेड़ डालने वाला भयंकर काम करने के लिए कुछ न करना पड़े। खिड़कियाँ तक बन्द थीं।

आसपास के मकानों के नीचे की मंजिल के कमरों के खिड़की दरवाजें का भी यही हाल था, बन्द थे। वहाँ के बाशिन्दों के मन में कौतूहल से ज्यादा भय था। ऊपर के बाकी तीनों मंजिलों के बाशिन्दे खिड़कियाँ ठीक से न खोलते हुए अथवा सामने के बरामदों में निकलते हुए कौतुहल चरितार्थ करने के लिए ताक-झॉक कर रहे थे...वह भी बाथरूम या रसोई की खिड़की से।

उन्हें इस घटना का कारण नहीं मालूम है, उन्होंने तो बस इतना ही देखा है कि कुछ लोग जी जान से भागते हुए एक आदमी का पीछा कर रहे थे और

चिल्ला रहे थे, 'साले को जान से मार डालो, मार-मारकर हलुआ बना दो साले का।' वह भगोड़ा इन्सान सात नम्बर के खुले दरवाजे से भीतर घुस गया था और दरवाजा भीतर से बन्द कर लिया था, तभी जो खदेड़ते हुए आए थे वे दरवाजा पीट रहे थे। उसके बाद ही वहाँ इतने लोग इकट्ठा हो गए, गेट घेर लिया कि लगा जमीन से निकले हैं...लोग-ही-लोग। ऊपर की मजिल के बासिन्दे थर-थर काँप रहे थे...उनके घरवाले अभी लौटे नहीं थे। वे लोग गेट पार कर के हाते मे घुस पाएँगे ? क्या हुआ है यह बात समझ में नहीं आ रही थी। हॉ इतना जरूर समझ मे आ रहा था कि 'पूर्व परिचित' किसी साम्प्रदायिक दगे की यह सूचना नहीं है। स्पष्ट है मामला बिल्कुल व्यक्तिगत है और इसका मूल रहस्य सूत्र उसी सात नम्बर फ्लैट में उपस्थित है।

यह 'रॉयटर' अर्थात् घर-घर बर्तन मॉजते फिरने वाली महिलाओ के आने का समय भी नहीं हुआ है, चार-पॉच फ्लैटों में काम करने पर भी काम निपटाकर वे लोग जा चुकी है। उनमें से कोई एक भी रहती तो कब का यह रहस्यभेद हो गया होता। न केवल मोहल्ले की, शहर-भर की खबर वे आकाशवाणी से पहले पेश कर देती हैं, अखबार निकलने से पहले विस्तारपूर्वक विवरण प्रस्तुत करती हैं। इस समय तो वे अपने-अपने घरों में होंगी।

इसी दीपक मैन्मन में बहुतों के घरों में फोन है। उन्होंने अपने पतियो के कर्मस्थलों में हालात की सूचना देते हुए उन्हें सावधान करना चाहा। परन्तु मुश्किल यह थी कि कुछ लोग अपने ऑफिसों से निकल चुके थे, घर के रास्ते पर थे। इसके अलावा...जो लड़के कॉलेज गए हैं ? जो दोस्तों से गपशप मार कर देर रात को घर लौटते हैं उन्हें कौन बताने जाएगा ? और उन लड़कियों को जो शाम के शो में सहेलियों के साथ सिनेमा देखने गई हैं ? इसीलिए घर में रह रही महिलाएँ छटपटा रही थीं।

हाँ, कुछ फ्लैटों में इस समय कोई भी नही है, घर नौकर की देख-रेख मे खाली पड़ा है; जो नौकर महाराज, चौकीदार, नौकर, सभी भूमिकाएँ सरलता पूर्वक निभाता है। दीपक मैन्सन अभिजात्य परिवारों का आवास-स्थल है....यहॉ रहने वाली अधिकांश महिलाएँ शाम को घर पर नहीं पाई जाती हैं।

जो तीनों भूमिकाएँ निभाने वाले व्यक्तियों पर घर का दायित्व सौंप कर चली गई हैं, उनके वे व्यक्तिगण बाहर झगड़े का आभास पाते ही रसोई की गैस

का चूल्हा बन्द कर बाहर निकल आए है ओर झगडे को ओर तेज करने के लिए ईधन जुटाने में लगे हैं। घर के दरवाजे की चाभी उन्हीं के पास थी, अतएव असुविधा का कोई प्रश्न ही नहीं उठता था।

इस समय चार मंजिले मैन्सन के चालीस फ्लैटो को भिन्न-भिन्न अवस्थाएँ होते हुए भी मानसिक अवस्था सबकी करीब-करीब मिलती-जुलती-सी थी.. केवल सात नम्बर वाले फ्लैट को छोडकर ।

सात नम्बर फ्लैट का भीतरी दृश्य इस वक्त कुछ इस प्रकार था : इस घर की सभी महिला सदस्याएँ घर पर उपस्थित थी ..जैसे गृहणी सुलेखा, पुत्रवधू स्वाति, कुँवारी कन्या नीता एवं विवाहिता कन्या रीता जो कि केवल एक ही दिन के लिए घूमने आई थी। दो बच्चे भी है, रीता की चार साल की बेटी मोउ और स्वाती का तीन साल का बेटा बादू।

दो पुरुष भी हैं नौकर यतीन और दूसरा दामाद बी. के. घोष अर्थात् विभास कमल घोष।.......रीता उसे 'कमल पुकारती है, सास-ससुर और बडा साला 'विभास'। ससुर रंजीत मित्रा इस समय घर से बाहर हैं, साला सुजीत मित्र बंगाल से बाहर। यही है इस परिवार का परिचय।

थोडी देर पहले खदेड़े गए पशु की भाति जो आदमी खुले दरवाजे से भीतर घुस आया था और जोर से दरवाजा भीतर से बन्द कर, दिवाल से पीठ टेके हॉफ रहा है, वही है विभास कमल। उसका यूँ ही रंग गोरा है, इस समय चेहरा इतना लाल हो रहा है कि डर लग रहा है कही चमडा फटकर खून न निकल आए। छाती इतनी जोर से धड़क रही थी कि लग रहा था अभी स्ट्रोक न हो जाए।

उधर क्रुद्ध जनता का गरजन, इधर यह हाल। भागी-भागी सास आई, बीवी, साली, सलहज आई, यतीन थी। बी मोउ खेलना छोड़ बाप के पैरों से लिपटकर रो पड़ी, 'ओ बापी तुमको क्या हो गया है ? ओ तुम ऐसे क्यों कर रहे हो ? मर जाओगे क्या ? ओ बापी...'

चार साल की माउ ने अभी तक मरते किसी को देखा नहीं है। उसने कहानी सुनी है शेर के मरने की, राक्षस के मरने की, जानवरों के मरने की। परन्तु बाप का अस्वाभाविक चेहरा देखकर चिल्ला उठी, 'ओ बापी, तुम क्या मर जाओगे ?'

'ओफ्फो, हट का दुष्ट लड़की........' कहकर रीता ने उसे परे धकेलते हुए यतीन से कहा, 'ले जा इसे। यतीन जबरदस्ती हटा ले गया, तो लडकी ने उसे दॉतो से काटा, लाते मारी और छिटककर बिस्तर पर जा गिरी....अब वह बिस्तर पर बैठी-बैठी रो रही है। बादू ने परिवेश का जायजा लेने के बाद रोना ही उचित समझा और रो रहा है। चूकि मॉ चुपाने नहीं आ रही है। वह रोना रोकने को तैयार नहीं है। बादू के जीवन मे मॉ का ऐसा दुर्व्यवहार पहली बार है।

परन्तु इन बच्चों का रोना देखने की फुर्सत है किसे ? बाहर के भयंकर कोलाहल और धमा-धम दरवाजे पर पड़ते धक्के, बडों को रुलाए डाल रहे थे।

सुलेखा रोते-रोते बोलीं, 'ओ बेटा विभास, बात क्या है ? वे लोग इस तरह से क्यो कर रहे हैं ?'

स्वाती बोली, 'पूछताछ बाद में कीजिएगा माँ, पहले जीजाजी को बैठने दीजिए।'

उसके बाद रीता ने कमीज उतार दी और स्वाती बार-बार कहने लगी, 'जीजाजी आप जरा लेट लीजिए।'

लेकिन लेटेगा कोई कैसे ?

जब बंद खिड़की को भेदकर भयंकर गर्जना भीतर आ रही थी कि, 'निकल आ साले, हिम्मत हो तो बाहर आ। तेरी खाल खींच लूँ। साला बदमाश, इन्सान को गाड़ी के नीचे कुचलकर भागने से बच निकलेगा क्या ?'

ऐसी हालत में कौन हिम्मतवाला लेट सकता है ?

पानी पीने के दो मिनट बाद तक पिंजड़े में बन्द शेर की तरह टहलने के बाद सहसा वह गरज उठा, 'मॉ, बाबूजी की बन्दूक निकाल तो दीजिए.....'

रंजीत मित्रा के बच्चे नौकरो के देखा-देखी बाप को बाबूजी कहकर पुकारते थे, इसीलिए बहू और दामाद भी उन्हें बाबूजी ही कहते हैं, यहॉ तक कि सुलेखा भी इसी की अभ्यस्त हो गई हैं।

'बाबूजी की बन्दूक निकाल तो दीजिए' सुनकर सुलेखा का दिल धक् से रह गया। यूँ लगा, दिल उछलकर अपने स्थान से हट गया है। उसी भयानक खालीपन ने उन्हें बैठने को मजबूर कर दिया। बैठते ही फक चेहरा लिए बोलीं—

'बन्दूक ?'

हा हा.. हरामजादो को जीवनलीला समाप्त कर दू सबकी खोपडी उडा दूंगा

रीता नीचे बैठकर कार्पेट मे पडे उस पानी को झाडकर साफ कर रही थी जो विभास कमल के मुह-आंख पर छींटा मारते वक्त गिरा था। अब उसने खड़े होकर तेज आवाज में पूछा, 'इस समय मोटरबाइक लेकर कहाँ जाना हुआ था ?'

विभास भारी आवाज में बोला, 'कहाँ जाना हुआ था, यह कोई इम्पॉटेन्ट बात नहीं है।'

रीता तीखी पर दबी जबान मे बोली, 'तब फिर इससे भी ज्यादा इम्पॉटेन्ट बात पूछती हूँ, 'किसे कुचलकर भागकर बिल में घुसे हो ? रास्ते का आदमी या मुहल्ले का कोई ?'

सुलेखा डरकर काँप उठीं, 'कैसी बात कर रही है रीता ? किसी को कुचलेगा क्यों ?'

रीता क्रुद्ध स्वरों में बोली, 'क्यों करेगा ? न जाने कितने कारणो से ऐसा किया जाता है माँ। रास्ते में गाड़ी के नीचे दबकर मर जाना कोई आश्चर्य की बात तो नहीं ? मैं तो सिर्फ ऐसा सोच रही हूँ कि इस तरह से भागकर छिपने से क्या जान बच सकेगी ?'

विभास कमल भी बिगड़ गया। बोला, 'तो फिर करना क्या होगा ? इन पागल कुत्तों के हाथों मे अपने को सौंप दूँ ? कहूँ कि लो नोच-नोच कर खाओ ? मोटर साइकिल तो ईटें मार-मार तोड़ ही डाली है।........ मुझे भी खत्म कर देते तो शायद खुश होतीं।

'ओ विकासदा, क्या सचमुच आपने किसी को दबाया है ?' फटी-फटी आवाज में नीता बोली, 'वह आदमी मर गया है ? कैसा आदमी है ? अमीर है या गरीब ? औरत है या मर्द ?'

रीता छोटी बहन की ओर देखकर व्यंग से बोली, 'नीच गरीब आदमी होता तो शायद तुम्हें सान्त्वना मिलती...है न ?'

इसके बाद किसी के गले से आवाज नहीं निकली। दरवाजे पर पड़ रहे धक्को से चार मंजिला यह मकान रह-रहकर काँपता रहा। साथ ही भयंकर कोलाहल और भी तीव्र हो उठा। गन्दी गालियों की बौछारें भी तेज हो गई। अब

वे लोग 'बाहर आओ' नही कह रहे थे। 'बाहर निकाल दीजिए। साले बदमाश को बाहर कर दीजिए। यह हरामी रंजित मित्रा का लाडला दामाद हो सकता है पर सारे मुहल्ले का कोई नहीं लगता है। अभी भी सीधी बात पर निकाल दीजिए, वरना मकान तोड़कर खींच निकालेंगे साले को। हरामजादे की खाल से जूते बनवाएँगे........'

ये सब मुहल्ले के लौंडे थे।

अपने को यह लोग न्याय नीति व सत्य-धर्म के रक्षक-धारत-वाहक समझते है। इसीलिए जब भी जहॉ कहीं गडबड़ होते देखते हैं, वहीं कूद पड़ते है और गड़बड़ी को दस गुना बढ़ा देते हैं।........इस तरह की भाषा का प्रयोग करने में वे माहिर होते हैं। गालियॉ, जितनी दूसरो से सीखी हैं उससे ज्यादा ता स्वरचित हैं। इनका उपयोग करने का अवसर हर समय मिलता कहॉ है ? इसीलिए हाथ आया मौका, छोड़ते नहीं हैं। फिर आज का मामला तो और भी गम्भीर है।

दरवाजा टूट गया तो क्या दशा होगी, सोचकर सुलेखा के हाथ-पॉव कॉपने लगे। फटी आवाज मे चिल्लाई, 'ओ बहूमाँ, अपने ससुर को फोन करो न.....'

कहने पर चैन नहीं पडा, खुद ही फोन की तरफ लपकीं। रिसीवर उठाकर डॉयल करने लगीं, परन्तु हाथो ने साथ नहीं दिया। लगभग रोकर बोल उठीं, 'ओ, बहूमॉ, ओ नीता, मुझे तो उनके ऑफिस का फोन नम्बर ही याद नहीं आ राह है।......आकर तुम लोग करो......कह दो जल्दी से चले आएँ।'

स्वाती ने नरम शान्त भाव से समझाना चाहा, 'बाबूजी क्या अभी भी दफ्तर में होंगे माँ ?'

'हैं, हैं', सुलेखा व्यस्तभाव से बोलीं, 'उन्हें देर होती ही है...देख न नीता....', बाहर के शोर-शराबे के कारण भीतर एक दूसरे की बात सुनाई नहीं दे रही थी।

तभी विभास एक बार और गरज उठा, 'नीता, बन्दूक तो निकालना।'

सुलेखा के लिए दामाद देवता तुल्य हो सकते हैं, परन्तु नीता के लिए तो यह बात नहीं थी। इसीलिए वह बोल उठी, 'क्या बकते हैं विभासदा ? बन्दूक लेकर क्या करेंगे ?' विभास कमल असहिष्णुतापूर्वक बोला, 'तुम्हे पता नहीं है बन्दूक से क्या किया जाता है ? शिकार करूँगा। निकालो, निकालो बन्दूक।'

उसके हाथ-पाँव थर-थर काँप रहे थे।

उसी उत्तेजनापूर्ण वातावरण में रीता का अकम्पित स्वर गूँजा, 'एक शिकार से मन नहीं भरा ?'

'शॅटअप।' विभास कमल बोल उठा, 'हर समय नाटक.....हूँ। मॉ बन्दूक निकालकर दीजिए, नहीं तो मैं दरवाजा खोलकर बाहर निकल जाता हूँ।'

सुलेखा ने दौड़कर दामाद की बनियान कसकर पकड़ ली, 'अरे बेटा, ऐसा सर्वनाशी काम मत करना.......वे लोग तो इस समय पागल कुत्ते जैसे हो रहे है।'

स्वाती दूसरे कमरे में गई थी। जल्दी से आकर उसने बाहरी दरवाजे मे ताला लगवाया और चाभी अपने ब्लाउज में छिपा लिया। अब कम-से-कम जीजाजी यहाँ से चाभी नहीं ले सकेगे और मूर्खो जैसी कोई हरकत नहीं कर बैठेगे।

रीता उधर देख रही थी।

अजीब-सी एक हँसी हँसकर बोली, 'क्यों फ्रिक करती हो भाभी ? तुम क्या सोच रही हो ये सचमुच निकल जाएँगे ?'

स्वाती जरा भीरु प्रकृति की है। डरी-डरी निगाहों से विभास की ओर देखकर सिर पर हाथ फेरते हुए इशारा किया अर्थात् क्या पता इस समय तो दिमाग गरम हो रहा है। परन्तु रीता ने हाथ हिलाकर भरोसा दिलाया।

तभी दरवाजे पर जोर का धक्का लगा। आवाज आई, 'तोड़ डालो, तोड़ डालो—साले बदमाश को बाहर घसीट लाओ।'

न केवल न्याय या नीति की बात थी, व्यक्तिगत आक्रोश भी था इसके साथ। इस घमण्डी नकचढ़े ढीठ इन्सान को मोहल्ले का हर लडका पहचानता था। जब तब अपनी फटफटी मोटर साइकिल के पीछे बीवी को बैठाए ससुराल आ धमकता है साला, देखकर लगता है उसके बाप का रास्ता है। ऐसा हवा से बातें करता बीच सड़क से आएगा कि यह भी नहीं देखेगा कि क्रिकेट खेलने के लिए बीच में ईटों की विकेट बनी है।

और जाते-जाते छींटाकसी ? वह क्या कुछ कम करता है ? फटाक् से कहेगा, 'साले लोफरों का अड्डा।' या फिर 'सब को पुलिसवैन मे बिठाकर चालान कर देना चाहिए।' और कुछ नहीं ता बगल से जाते हुए बोलेगा, 'रबिश', 'मस्तान'।

यह सब बातें क्या अपमानजनक नहीं हैं ?

यह बातें क्या वे भूल गए हैं ?

अगर तुम हमें मक्खी-मच्छर समझो तो मौका मिलने पर हम भी तुम्हे मच्छर-मक्खी की तरह मारेंगे।

इतने अरसे से बस इसी कारण बरदाश्त करते आए हैं क्योंकि तुम रंजीत मित्रा के दामाद हो। वैसे पीठ पीछे तो हम भी कहते हैं, 'वाइसराय', 'नवाब खिज खाँ'।

आज विभास कमल ने उन्हें मौका दे दिया है। इसके अलावा जब 'पब्लिक' अपने हाथों में कानून लेती है तब उसकी कोई सीमा नही रहती है।

असहनीय कटुयोक्तियाँ कानों में आ रही थीं। लग रहा था दरवाजा अब टूटा तब टूटा....अब पल-भर भी खड़ा नहीं रहेगा....धक्को की वजह से छिटकनी पहले ही टूट गई थी.......केवल लॉक के बल पर टिका हुआ था। वह भी राम जाने कब तक ?

उधर खिड़कियों पर ईट बरसने लगी थी।

बाकी उनतालीस फ्लैटों से कोई आहट नहीं। भीतर-ही-भीतर अधिकाश लोगों ने बाहर गए अपनों को सूचित तो कर ही दिया था, लेकिन पुलिस को खबर करने का साहस किसी ने नही किया था।

न जाने इससे कौन-सी मुसीबत आ जाए ? जो खबर करेगा उसे ही तो सारी जिम्मेदारी लेनी पड़ेगी......और बाद में पता भी तो चल जाएगा कि खबर दी किसने है। इससे तो अच्छा यही है कि जो चाहे सो हो।

धीरे-धीरे उत्तेजना का कारण सबको मालूम हो गया था।

रंजीत मित्रा का शराबी दामाद अपनी राक्षस जैसी मोटर साइकिल पर वीरविक्रम सरीखा चला आ रहा था जब उसने शशि मिस्त्री की आठ साल की लड़की को दबा दिया था।

माना कि अनजाने में दबाया था, परन्तु उतरकर उस लड़की की उचित व्यवस्था करनी थी या नहीं ? अस्पताल पहुँचाओ, रुपया-पैसा खर्च करो, खुद जाकर पुलिस को खबर करो......तब न लोग तुम्हें इन्सान समझेंगे ? वह नहीं, दबाकर आप हवा से बातें करते हुए भाग खड़े हुए। पब्लिक भाल छोड़ देगी ?

जाने देगी ? लड़की का क्या हुआ, यह न देखकर सबने मिलकर मोटर साइकिल तोड़कर ही दम लिया।

अतएव भगोड़े अपराधी को सुरक्षित आश्रय की ओर ही भागना पड़ा। गनीमत थी कि लक्ष्यस्थल पास था।

इन्जीनियर विभास कमल के कारखाने के दफ्तर मे सप्ताह के बीच में एक दिन की छुट्टी होती है इसीलिए सुलेखा वही दिन ध्यान मे रखकर दामाद को खाने का निमन्त्रण देती है। ससुर ओर दामाद की मुलाकातें कम ही होती है।, हालाँकि इससे दोनों ही मन-ही-मन खुश होते है। एक ही आकाश पर दो सूर्य पृथ्वी के लिए हितकर नहीं हैं। सुलेखा को इससे परम शान्ति मिलती है, उनके दामाद को भी।

उसी निर्मल शान्ति के मध्य मध्याह्न भोजन सम्पन्न हुआ था...सुलेखा दो बेटी, बहू, दामाद और दो पोते-पोती के साथ विभाग कमल ने कुछ देर ब्रिज खेला। चाय पीकर बोला, 'अच्छा, एक चक्कर लगाकर आता हूँ।'

'चक्कर लगाकर' आने का अर्थ और कोई भले ही न समझे, रीता खूब समझती है। रीता तो जानती है कि विभास के गरमाने का वक्त क्या है। फिर भी अपनी जानकारी को छिपाते हूए अबोधभाव से पूछ बैठी थी रीता, 'इस वक्त कहाँ चक्कर काटने चले ?' विभास ने कहा था, 'कहीं नहीं, यूँ ही। इतना खा लिया है कि चक्कर लगाऐ बगैर नीचे नहीं उतरेगा।'

सुलेखा दामाद के मामले में सदा तटस्थ रहती है। जल्दी से बोली थीं, 'जाओ बेटा, घूम आओ। रात को तुम्हें अपने ससुर के साथ खाना खाना पड़ेगा। कम खाओगे तो डॉट लगाएँगे।'

ये लोग यही करते हैं। रीता उसका पति और उसकी बेटी। विभास की इस छुट्टी के दिन तीनों माँ के पास चले आते है, दोपहर को भरपेट खाने के बाद दिनभर यहाँ रह कर, घर के मालिक से मिलकर, रात का खाना खाकर वापस घर लौटते हैं। आज भी यही कर रहे थे।

केवल विभास को 'आवश्यक वस्तु' साथ न होने के कारण निकलना पड़ा था, वरना परिवेश बड़ा ही सुखकर था। तीन ओर से तीन तरुणी, चित्तविनोदन कर रही थीं--पत्नी, सलहज और साली। इन दिनों सलहज के पति महोदय

कलकत्ते के बाहर है और इसी कारण वह खाली है इन तीनो के अतिरिक्त सिर पर एक महिला हर समय मौजूद थी देखभाल करने को। इसके अलावा, विभास अपने को बहुत बडा क्यों न समझे, ये सारी सुख-सुविधाएँ जुटा तो सका नहीं है। अतएव यहॉ आकर जब हाथ-पॉव ढीला कर पड जाता है तब अपने को किसी नवाब से कम नही समझता है।

'आवश्यक वस्तु' साथ मौजूद रहती तो निकलना नही पडता, बस जरा चालाकी से एकान्त की सृष्टि कर लेता। जैसा कि अक्सर करता ही है। लगभग प्रत्येक बुधवार को ससुराल में निमन्त्रण खाने आता है विभास कमल और इस युग की अन्य सभी लड़कियों की भाति रीता मायके आती है।

शाम को दोनों बच्चों को लेकर नौकर दीपक मैन्सन के कम्पाउन्ड मे निकलता है। जहॉ बैठाकर चक्कर काट आओ न। बेचारी इतनी भोली है कि सवारी करने के लिए एक पीठ तक नहीं जुटा सकी है आज भी।'

नीता बोल उठी, 'अगर नहीं मिली है तो दूसरे की जगह दखल क्यो करूँ ? मैं बैठी आकाश के तारे ही गिनूँगी।'

विभास कमल हॅसा, 'तुम्हारी दीदी ने ऐसा लोभनीय प्रस्ताव पेश किया था कि मेरा हृदय ही नाच उठा था लेकिन अब स्पष्ट हो गया कि इसमें षड्यन्त्र था। तुम जाओगी नहीं वह जानती थी।'

रीता बोल उठी, 'देख लो जरा कमलबाबू के नखरे, तेरी कहॉ दो बार खुशामद करेंगे वह नहीं, सीधे मान बैठे कि तू जाएगी ही नही।'

विभास कमल हॅसते-हॅसते चला गया। कौन जानता था कि थोड़ी देर बाद ही तूफान आने वाला है।

रीता ने स्वाती को अभय प्रदान करते हुए कहा था, विभास किवाड़ खोलकर सचमुच नहीं जाएगा, फिर भी सुलेखा दामाद को रोकने की चेष्टा कर रही थी।

विभास भी उन्हीं के जैसा हो रहा था। भयकर आवाज में बोला, 'इसीलिए मै उनके साथ पागल कुत्तों जैसा ही ट्रीटमेन्ट करना चाहता हूँ। मुझे बन्दूक चाहिए।'

लेकिन सुलेखा तो पागल नहीं हैं। उनका दिमाग काम कर रहा था,

इसीलिए थोडी देर बाद घबडाई हुई सी आकर बोली थी बाबूजी के दराज की चाभी कहॉ है रे नीता ? मुझे तो कही....'

हॉ, सुलेखा को यही तरकीब सूझी थी।

पल भर में नीता ने मॉ की चाल समझ ली, क्योंकि 'बाबू जी की चाभी' जैसी कोई चीज इस घर मे है नहीं ? फिर भी नीता ने बनते हुए पूछा, 'बाबूजी के दराज की चाभी ? मैंने तो कभी आँख से भी नही देखा है। न जाने बाबूजी कहॉ रखते हैं...'

इस चाल का अन्दाजा सभी को लग गया। इस घर के रहने वाले—सभी। रीता-स्वाती यहॉ तक कि अन्तरालवर्ती यतीन को भी। ऐसी घनघोर परिस्थिति मे यतीन इस बैठक के आस-पास न रहकर क्या बच्चों को लिये बैठा रहेगा ? ऐसा तो हो ही नहीं सकता है।

सभी समझ गए पर विभास न समझ सका।

उसने सोचा बन्दूक किसी और के हाथ न लगे यही सोचकर ससुर चाभी अपने पास रखते है। अतएव असहिष्णुतापूर्वक बोल उठा, 'फोन से पूछिए। घर के बाहर थोड़े ही होगी।'

'ओ अच्छा....' सुलेखा फिर अभिनय करते हुए बोली, 'ओ नीता, जल्दी से बाबूजी से पूछ तो ले, दराज की चाभी कहॉ...'

नीता बोली, 'अभी तो फोन किया था.. .बजता ही रहा।'

'बजता ही रहा ? अभी दफ्तर बन्द हो गया ?' विभास हताश हुआ।

सुलेखा और भी आकुल हुई, विश्वस्तभाव से बोली, 'इतनी जल्दी बन्द हो गया ? तू फिर से करके तो देख नीता।'

विभास को सहसा लगा कि यह चेष्टा ठीक तरह स नही की जा रही है। इसमें कुछ कमी है। वह स्वयं गया। बज्रमुष्टिका मे रिसीवर उठाकर कड़कडा कर नम्बरों को डायल कर उधर घंटी बजने से पहले ही 'हैलो हैलो' करने लगा। नही, सचमुच ही घंटी बजती रही।

विभास ने भयंकर मुँह बनाकर पूछा, 'डुप्लीकेट चाभी नहीं है ?'

रीता पास आई। बोली, 'नहीं। इस घर मे चाभी की डुप्लीकेट नहीं है। सब खो जाती हैं।'

'ओह ! ठीक है, मै पुलिस स्टेशन में फोन करता हूँ।'

रीता ने उसका हाथ पकड लिया। गम्भीर भाव से बोली, 'पुलिस आकर सबसे पहले तुम्हे ही पकड़ेगी।'

विभास क्या यह नहीं जानता है ? लेकिन क्या इसीलिए बैठे-बैठे गालियाँ सुने ? असहिष्णु न हो ? अस्थिरता नही प्रकट करे ? उसकी धमनियो में क्या अभिजात वर्ग का नीला खून नहीं बह रहा है ?

बाहर लोग क्या कह रहे है वह क्या सुनाई नहीं पड़ रहा है ? क्यों नहीं पड़ेगा वरना सुलेखा कानो में अगुली क्यों डालतीं ? नीता सिर क्यों पीटती फिर ?

स्वाती ही बस कमरे में नही है, वह बच्चों को देखने चली गई थी इसलिए यतीन भी। भाभीजी की ऑखों के सामने वह ड्राइंगरूम की खिडकी से छिपकर बाते कैसे सुन सकता है भला ?

सुलेखा को देख-सुनकर आश्चर्य हो रहा है कि इसी इमारत के उन्तालीस फ्लैटों मे से एक प्राणी इन लोगों की इस असहाय अवस्था से मुक्ति दिलाने के लिए आगे नहीं आ रहा है ? इनमें बहुत लोग अच्छे-खासे उच्च पदस्थ अफरस हैं। उनके फोन करते ही पुलिस फौरन आ जाएगी। परन्तु लग नही रहा है कि कोई अनाथों के नाथ, विपदग्रस्तों के मधुसूदन पुलिस को बुलाएगा। समझ में नही आ रहा है कि और लोग रंजीत मित्रा के प्रति इस गन्दी असम्मान की भावना को सहन कैसे कर रहे हैं ? कम-से-कम मिस्टर चटर्जी, मिस्टर वासु, मिस्टर कौल, मिस्टर पटनायक और मिसेस रहमान तो कुछ करते।

ये लोग न केवल रंजीत मित्रा के विशेष मित्र थे क्षमता-सम्पन्न भी थे... ..इसके अलावा ये लोग तो तिमंजिले और चौमजिले पर रहते हैं, क्या खिड़की से गर्दन झुकाकर इस भीड़ को डाँट नहीं सकते है ?

अब तो सुलेखा को लग रहा है कि क्यो मैने अपने हार्ट की बीमारी के बहाने, बिनती-चिरौरी करके नीचे वाला फ्लैट लिया ? नीचे की मंजिल है तभी न इतना डर है, खतरा है ?

जन-कोलाहल भी जन-कोलाहल की तरह कभी निस्तेज होने लगता है, कभी भभक उठता है। यहॉ भी ऐसा ही हो रहा था। कभी-कभी लग रहा

है—इनकी एनर्जी खत्म हो गई है, वे लोग लौट रहे हैं, लेकिन पल-भर बाद ही फिर वही 'मार साले को' 'चमड़ी उधेड़ दो' 'गाड़ दो जमीन मे' 'कुत्ते से नुचवा दो' शुरू हो जाता, पहले से कहीं शोर से।

धीरे-धीरे उन्होने घर के अन्य लोगों को भी गालियाँ देनी शुरू कर दी थीं।

सुलेखा स्तब्ध होकर सुन रही थीं, इतने सभ्य व्यक्ति उपस्थित हैं फिर भी वे लोग रीता को 'पीठ पर सवार बीवी' नीता को 'रंगीली सुन्दरी' और सुलेखा को कह रहे है 'दामाद प्रेमी बुढ़िया।'

घंटे पहले तक इन बातों की क्या किसी ने कल्पना की थी ?

एक बार सुलेखा चीख उठी, 'नीता, कोई कुछ करता-कहता क्यो नहीं है ?'

नीता ने आँख उठाकर देखने के बाद धीरे से कहा, 'कहेंगे क्यों ? वे तो एनज्वॉय कर रहे हैं।'

आहत स्वरों में सुलेखा बोली, 'हमारे इस अपमान को लोग एनज्वॉय कर रहे हैं ?'

नीता की उम्र उसकी माँ से बहुत कम है, दुनिया के रंग-ढंग का ज्ञान बहुत कम है, होना स्वाभाविक ही है, फिर भी वह आराम से बोल गई, 'कर रहे है और करेंगे भी। घटना अगर इसके विपरीत होती तो शायद हम भी यही करते।'

'हम भी यही करते ?' सुलेखा फिर चिल्ला उठीं, 'तू क्या कह रही है नीता ? हम क्या ऐसे है नीता ?'

अब रीता ने माँ को देखा, गम्भीर स्वरो में बोली, 'वे लोग करेंगे ही माँ। 'हो सकता है' नहीं, निश्चय ही करेंगे। यही इन्सान का असली स्वभाव हैं मजबूर होकर अगर किसी को अपने से बड़ा मानना पड़ता है या फिर अपने बराबर का सोचना पड़ता है, सहसा उसे ही रास्ते में पिटते देखकर खुश होना स्वाभाविक है। देखना, जिसके साथ कभी कोई वास्ता तक न रहा हो, जानते तक नहीं वह भी मौका पाकर दो हाथ लगाने से चूकता नहीं है।'

सुलेखा कानों से हाथ हटा चुकी थीं क्यों कि बाहर शोर थोड़ी देर को हल्का पड़ा था। हो सकता है फालतू लोग अपने काम पर लौट गए हैं या फिर दरवाजे न तोड़ सकने का ही गम हो।

इस बीच-दीपक मैन्सन का केयर टेकर कह गया है कि इसी तरह से चलता रहा तो वह स्टेप लेने को बाध्य होगा—हालाँकि यह नहीं बताया है कि कौन-सा स्टेप वह लेगा। हो सकता है, मालिक को सूचित करेगा या फिर पुलिस बुलाएगा। इसीलिए भीड़ दरवाजे से हटकर भुनभुनाते हुए सलाह कर रही है। इध र हर फ्लैट मे खुसर-फुसुर होने लगी थी।

किसी-किसी ने तो अन्दाज लगाना शुरू कर दिया था कि इस शोर के ६ ीमे पड़ने के पीछे 'रुपयों का भारी हाथ' है। क्या पता इन लोगों के नेता के साथ खिड़की के पीछे से किसी तरह का समझौता न हो गया हो।

जो घरेलू नौकर घटनास्थल का परिदर्शन कर लौटे हैं, वे लोग जाने-अनजाने तथ्यों को मिलाकर घटना का इतना विस्तृत कर चुके हैं कि सबको पता चल गया हो कि शशि मिस्त्री की लड़की का सिर पिसकर हलुआ हो गया है बॉडी तो शेपलेस हो गई है।

सभी धिक्कार रहे थे, परन्तु यह बात किसी के दिमाग में नहीं आ रही थी कि शशि की दुकान पर जाकर पता करना जरूरी है कि लडकी का हुआ क्या, किस अस्पताल में ले गए हैं, कौन ले गया है ?

मोहल्ले मे शशि मिस्त्री की एक छोटी-मोटी दुकान है। इसी दीपक मैन्सन के विभिन्न झमेलों को निपटाता रहता है। बुलाते ही दुकान छोड़कर चला आता है, इतना शरीफ है। बहुत बार लोगों ने दुकान पर उसकी लड़की को बैठे देखा है। फूले-फूले से गाल, मोटी-मोटी-सी लड़की को देखकर कई बार लोगों ने ताने कसे हैं, 'ये लोग क्या खिलाकर अपने बच्चों का ऐसा स्वास्थ्य बनाते हैं बावा ? हमारे घरों में तो...'

सचमुच, बड़े लोगो के घरों में जन्म से पूर्व माँ के गर्भ में आते ही... तब से लेकर जन्मावधि शिशु के स्वास्थ्य के लिए जैसी साधना की जाती है उसका बखान किया जाए तो लोग विश्वास नहीं करेंगे, फिर भी पतले-पतले हाथ, पाँव, हवा में उड जाएँ जैसे लड़के-लड़की ही ज्यादा मिलेंगे।

खैर, शशि मिस्त्री की लड़की की शक्ल सबको याद आई और वह चेहरा दुनिया से उठ गया सोचकर उन्हें दुःख भी हुआ। बहुत लोग बच्चों का कान बचाकर कहने-सुनने भी लगे, यद्यपि आजकल के बच्चों को छिपाकर कुछ कहना हास्यकर लगता है।

सहसा उस निस्तेज होते समुद्र में फिर तूफान आया। फिर तरह-तरह की आवाजें सुनाई पड़ने लगी। जिसकों सुनकर अन्दाज लगा कि स्वयं रंजीत मित्रा का रंगमंच पर आविर्भाव हुआ है और लोगो ने उनकी कार घेर ली है। चलो एक और मजेदार किस्सा देखने-सुनने को मिला। अब ईंटेबाजी का खतरा नहीं था इसीलिए, दुमजिले, तिमंजिले और चारमंजिले की खिड़कियाँ फटाफट खुल गई। नीचे वालों ने एक ही पट खोला, ताकि अंग कुछ इधर-उधर होता दिखाई दिया तो झट बन्द कर सकेंगे।

कर्मस्थल से उठने के बाद अकर्मस्थलों का चक्कर लगाते हुए घर लौटने की आदत है रंजीत मित्रा की, परन्तु किसी-किसी दिन कहते हैं दफ्तर में काम था या फिर किसी जरूरी काम से रुकना पड़ा था। घर से अगर फोन किया जाता तो मालूम होता, 'वे तो बड़ी देर पहले जा चुके है, और उसी दिन यह प्रश्न पूछा जाता था।

लेकिन क्यों ? रंजीत मित्रा जैसा इन्सान क्या अपने बीवी-बच्चो से डरता है ? नहीं, यह बात बिलकुल नहीं है, बल्कि बात कुछ और है, रंजीत मित्रा को अपने 'नाम' से बेहद प्यार है। वह नाम औरों की नजरों में मधुर, मोहन, सुन्दर, सुशोभन एक ज्योतिर्मय रूपों में विस्फुटित हो इसी साधन में लगे हैं रंजीत मित्रा। अन्दर की बनियान चाहे कितनी ही गन्दी और फटी क्यों न हो, ऊपर की कमीज़ में वे एक लकीर तक पड़ने न देंगे, जरा-सी तह तक नहीं बिगड़ेगी। घर हो चाहे बाहर, सभी जगह एक-सा नियम है।

खासतौर से बेटे संजीत के पास। संजीत की दृष्टि बड़ी तीक्ष्ण है--लगता है वह ऊपरी परत को बेधते हुए नीचे के छिद्रों को देख लेगा।

इसीलिए और भी ज्यादा रंग-रोगन लगाने की जरूरत होती है। बस सुविध ा इतनी-सी है उसे दफ्तर के काम से प्रायः बाहर जाना पड़ता है। शायद यही कारण है कि उनका होनहार बेटा अभी भी बाप के साथ बीवी-बच्चो को लेकर रह रहा है, वरना कब का चला गया होता।

इस समय संजीत कलकत्ते में है नहीं इसीलिए रंजीत उनके अपने घूमने-घामने के काम में कुछ ज्यादा ही समय लगा रहे हैं। आज भी यही बात थी। गेट मे घुसने से पहले ही भीड़ पर नजर पड चुकी थी। गाड़ी अन्दर घुसते ही मुँह निकालकर अत्यन्त विनीत भाव से पूछा, 'मामला क्या है ?'

हॉं, कार वे स्वय चलाते है, अपनी गतिविधि की खबर वह अपनी मुट्ठी से बाहर जाने देना नहीं चाहते है।

अतएव रंजीत मित्रा का ही चेहरा दिखाई पड़ा।

दूसरे ही क्षण स्पष्ट सुनाई पडा, नहीं कोई गलती नहीं हुई, साफ-साफ सुना, 'यह लो, साला बुड्ढा आ गया है।'

आश्चर्यचकित होकर रंजीत मित्रा ने अपने चारो ओर देखने का प्रयास किया, किसके लिए यह बात कही गई है, जानना चाहा, परन्तु अपने अलावा वहॉं और किसी को न देख कर सोचने की कोशिश की, इस बारह घंटों के बीच दुनिया मे ऐसी कौन-सी दुर्घटना हो सकती है कि उसके लिए....

सोचने का वक्त नहीं मिला।

गाड़ी का घेराव हो गया, कटुक्तियॉं शुरू हो गई। इस समय वे दल मे भारी थे और जो आया था वह 'अपराधी पक्ष' का था अतएव उसे निडर होकर कुछ भी कहा जा सकता था। हर समय केचुआ बने रहने की क्या कोई प्रतिक्रिया न होगी ? परन्तु रंजीत मित्रा अपने दामाद विभास कमल की तरह मूर्ख नही है कि कटुयोक्तियाँ सुनकर बन्दूक ढूँढ़ते। वे मोटर से बाहर निकल आए।

हॉं उतर आए, क्योंकि वे मनुष्य-चरित्र के बारे में अनभिज्ञ नहीं है। जनता के स्वभाव की पहचान है उन्हें। कभी लम्बे अरसे तक वे लेबर आफिसर रह चुके थे। इतना वे जानते हैं कि जब इतने सारे आदमी एक साथ झुण्ड बनाकर आते है तब विपक्षी को झट से छुरा नहीं भोंकते है।

फिर भी सावधानी बरतते हुए, घिरी हुई मोटर से किसी तरह नीचे उतर आए। आत्मसमर्पण की मुद्रा में दोनों हाथ ऊपर उठा कर खड़ें हो गए। शान्त भाव से बोले, 'मामला क्या है मेरी समझ मे कुछ नहीं आ रहा है भाई। मुझे जरा बता तो दीजिए।'

इस शान्त और आत्मसमर्पण की मुद्रा का परिणाम अच्छा हुआ है। दो-एक जने 'अगुआ' होकर आगे आए और उत्तेजित भाषा का प्रयोग करते हुए 'मामला' समझाने लगे।

सुनकर मानों रंजीत मित्रा को बिजली का झटका लगा। इस लड़के का दोनों कन्धा पकड़कर लटक से गए, 'यह क्या कह रहे हो भाई हमारे शशि की वही बिटिया'

हालाकि इस समय शशि की 'वही' लड़की को मन-ही-मन पहचान नहीं पा रहे थे फिर भी दृश्यतः यही करना उचित जान पड़ा। उसके बाद ही दोनों हाथों से कनपटी दबाते हुए ऑखें कर लीं, 'ओफ्फ, सोच ही नहीं पा रहा हूँ,

इन लोगो के साथ रंजीत मित्रा 'भाई' कहकर ही बात करते हैं, जब ये लोग आते हैं, चन्दा लेने या मोहल्ले में दशहरे के समय दुर्गापूजा में प्रेसीडेन्ट बनाने का अनुरोध करने आते हैं। कहते हैं, 'सब समझता हूॅ भाई, मोहल्ले की पूजा मे मुझे तो और भी चन्दा देना चहिए, लेकिन मुश्किल ये है कि कर्तव्य तो घर मे भी करना पड़ता है। और बाहर भी। जहॉ काम करता हूँ वहॉ के लोगों की इच्छा भी तो पूरी करनी पड़ती है। वे लोग कई हिस्सों में पूजा करते है।

और दूसरे प्रस्तावो पर हाथ जोड़कर कहते हैं, 'बस यही मत कहो भाई. .. इसके लिए माफ करना पड़ेगा। मै। जरूर आऊॅगा, पंडाल के नीचे बैठा रहूॅगा, ठाकुरजी के दर्शन करूॅगा, लेकिन प्रेसीडेन्ट बनकर उच्चासन पर नहीं बैठ सकूॅगा। और भी यहॉ कई योग्य व्यक्ति हैं जो शायद इससे खुश ही होंगे....'

इसी तरह 'भाई' कहकर शहद घोलकर बात करने की आदत है। ये सारे के सारे लड़के वही तो नहीं हैं कुछ इनमें नए भी हैं। वही नए और-और भी अनेक लोग बाते सुनकर मुग्ध हो गए। शशि मिस्त्री के लड़की का 'बेमौत' मर जाना बड़ी देर तक सोच न सके रंजीत मित्रा, कनपटी दबाए मोटर से टिके खड़े रहे फिर सहसा बल प्राप्त कर पूछ बैठे, 'तुम लोगों ने पुलिस को इत्तला नहीं दी'

'पुलिस'।

लोग एक दूसरे का मुॅह देखने लगे।

क्योंकि पुलिस को खबर करके वे लोग अभी तक जिस रोमांचक परिस्थिति से गुजर रहे थे उससे वंचित रह जाते....परन्तु रंजीत मित्रा के उत्तरप्रार्थी चेहरे से तो यह बात बताई जा सकती है।

इसीलिए झट से एक बोला, 'पुलिस की बात छोड़िए।'

क्यों छोड़ा जाए यह पूछना बेकार है। छोड़ तो देना ही चाहिए क्योकि इस त्रुटि को छिपाने का कारण होना चाहिए।

रंजीत मित्रा की नजर के सामने जितने चेहरे थे सबकी तरफ देखकर वेदनाहत स्वरों में वे बोले, 'बात तो ठीक है। अपने देश की पुलिस पर कई बार गर्व तक नहीं कर सकते हैं हम। फिर भी अपराधी को दण्ड मिलना ही चाहिए।'

सहसा जोश मे आ गए। बोले, 'हॉ, मिलना चाहिए। यद्यपि ऐसे घिनौन अपराध के लिए क्या सजा मिलनी चाहिए यह तो मै जानता नही हूॅ।. .ओफ्फ, सोचा नहीं जा सकता है कि एक नन्हीं-सी बच्ची को कुचलकर कोई भाग रहा है। इतनी बड़ी अमानवता ओह, मै यह नहीं कहता हूॅ कि एक्सीडेन्ट लोग जान-बूझकर करते हैं, फिर भी एक्सीडेन्ट ही है। हो सकता है यह रंजीत मित्रा ही कल कोई ऐसी बात कर बैठे...फिर भी कहूॅगा कि मोटर या स्कूटर चलाते वक्त खूब सावधानी बरतनी चाहिए। और यही 'उचित को' यह अपराधी नही करता है। हॉ हॉ अपराधी...इस समय मैं अपने दामाद को एक घृणित अपराध ी के अलावा कुछ और सोच भी नही सकता हूॅ। नालायक, जानवर, हृदयहीन, कापुरुष। मुझे तो लग रहा है मुझे खुद जाकर थाने में रिपोर्ट लिखवाना चाहिए, जबकि यह अपराधी मेरे ही घर में मुॅह छिपाए बैठा है। पर तुम तो समझ ही रहे हो भाई...इसके साथ मेरी लड़की सुख-दुःख जुड़ा है...तुम्हीं लोग चले जाओ, असली बात बताकर, न्याय और सत्य की अर्जी लेकर...'

जनता स्तब्ध रह गई।

मानो कोई मंच पर भाषण दे रहा हो, वही सुन रहे हैं या फिर रंगमच पर दी गई कोई ऊॅंचे स्तर की वक्तृता। मानो सॉप की ऑंखो में कोई धूल झोंक रहा हो। किसी के मुॅह से नही निकला कि 'अच्छा जाता हूॅ।'

थाने पर डायरी लिखवाना क्या इतना आसान काम है ? प्रत्यक्षदर्शियों को लेकर खींचातानी नहीं होगी ? अपराधी से ज्यादा ही इनकी गत बनेगी।

रंजीत मित्र मन-ही-मन हॅंसे।

और भी अधिक वेदनाविधुर हॅसी हॅसकर बोले, 'खूब समझ रहा हूॅं कि अपराधी मेरा दामाद है, मेरा एकलौता दामाद है इसीलिएं (इस जगह पर गला हल्का-सा कॉप उठा) तुम लोग हिचक रहे हो, कुण्ठित हो रहे हो, फिर भी कहूॅगा, झिझक छोड़ों। मैं तो जरा भी नहीं हिचक रहा हूॅ ? मैं तो दिल से चाहता हूॅ तो मै उसे इस जनता की अदालत के बीच लाकर खड़ा किए दे रहा हूॅ। तुम लोग उसे जो सजा देना चाहो, दो। मुझे तो लगता है, यहॉ शशि को भी बुला लेना चाहिए।'

अपने इतने लम्बे जीवन काल में न जाने इतने शब्दों का पहले कभी प्रयोग किया था, जिन्हें इस कम समय बोल गए।

शशि का नाम सुनकर कोई दबी जुबान से कुछ बोले.. .शायद कह रहे हो कि इस समय शशि कहाँ मिलेगा ? वह क्या दुकान खोले बैठा होगा ?

रजीत मित्रा बोले, 'क्या कह रहे हो, शशि नहीं मिलेगा ?'

कोई बोला, 'नहीं, मतलब कि दुकान पर तो होगा नही...'

दूसरा बोला, 'शायद इस वक्त हस्पताल मे हो।'

मित्रा बोले, 'राइट ! तब फिर हमें वहीं जाना होगा। कम-से-कम पूछकर जानना होगा कि वह क्या सजा देना चाहता है। उसकी शोकाकुल आत्मा क्या कहती है। मै उसकी राय जानना चाहूँगा.. .तुममे से कोई एक मेरे साथ चलो।'

'चलो !' चलो मतलब ? सुनकर भौचक रह गए सब . कहाँ चलो ? किसे पता है कि किस अस्पताल मे जाने पर शशि मिस्त्री की लडकी का पता चलेगा ?

रजीत मित्रा ने सॉपों को टोकरी में भर डाला था—बस ढक्कन लगाना भर बाकी था। वही लगाया, बोले, 'उसे कहाँ ले गया है ? पी॰ जे॰ मे ? शम्भूनाथ मे ? या कि बॉड़े ?' प्रत्याशभरी, वेदना कोमल, आत्मा-धिक्कार से म्लान, आहत दृष्टि।

अब एक जुल्फीदार बालों वाला लडका हिम्मत करके आगे आया। बोला, 'हम लोग सर गाड़ी रोक रहे थे, देखा नही कौन लोग उठाकर ले गए।' वह भूल गया कि अभी 'साला' 'साला' वही चिल्ला रहा था।

'आफ्फो ! तब तो बड़ी मुश्किल है।' रंजीत मित्रा बोले, 'ठीक है, मै ही हर संभव जगहों में फोन से पूछकर मालूम करूँगा। क्या बजा था उस वक्त ?'

रजीत मित्रा ने झट से कार के अन्दर हाथ डालकर ऑफिस का बैग उठाया—उसमें से एक नोट-बुक जैसी चीज खीच निकाली। पेन निकालकर उस पर कुछ लिखा—शायद वक्त नोट किया। उसके बाद ऑख उठाकर बोले, 'तुम लोग जिन्होंने अपनी ऑखों से देखा था, उनका नाम भी तो मालूम होना चाहिए. ..'

अभी इन लोगो ने आतंकित होकर एक-दूसरे को देखा। पीछे से भीड पतली होने लगी।

'कहॉ...बताइए भाई। कम-से-कम दो चार जनो का नाम तो बताइए... वरना वे लोग मुझसे जिरह करेंगे। तब मैं यहॉ था कहॉ ? पूछेगे...मैंने कहॉ देखा

है ? मैने जिनसे विश्वस्तसूत्रो से जाना है उनका नाम तो चाहिए न ? इसके अलावा...'

उसी पेन से नोट-बुक पर कुछ लिखते हुए आगे बोले, 'इसके अलावा दामाद का यह पक्षीराज....यह भी इन्श्योर्ड है.. जख्मी होने पर भी दिखाना तो पडेगा न ? यही कि परिस्थिति कैसी हो गई थी, उन्हें यह समझाना पडेगा ही।. .मैने रास्ते के किनारे पड़ी देखा तो, उस समय कहॉ पता था किसकी है।...खैर कम-से-कम दो चार प्रत्यक्षदर्शी...जिनके नाम न दिया तो...'

ये कैसी झझट है रे बाबा ? यह आदमी कह रहा है ? अस्पताल का पता करने के लिए इन बातो से क्या मतलब ? अब ये लोग सरकने के चक्कर में पडे।

'ठीक है।' रंजीत मित्रा बोले, 'तब फिर तुम लोग जितनी जल्दी हो सके, मुझे खबर लाकर दो भाई। कम-से-कम खर्चा के लिए कुछ रुपए दे ही आने होगे। बेचारा गरीब आदमी। और अगर बिल्कुल ही खत्म न हुई हो तो जितना भी रुपया लगे, जैसा ट्रीटमेंट हो....

रंजीत मित्रा पल-भर को रुके, चश्मा उतारा-ऑखें रूमाल से पोंछी, फिर धीरे-धीरे बोले, 'ईश्वर मुझे यह प्रायश्चित्त करने का मौका दे....हे भगवान...'

वे अवाक् होकर देखते रहे।

जो लड़का हाय हुल्लड़ कर रहा था अब तक, सहानुभूतिपूर्वक आवाज में बोला, 'इसमे आपका क्या दोष है सर ?' भरी-भरी आवाज में रंजीत मित्रा की भी थी, 'देखा जाए तो कुछ नहीं। लेकिन मेरे अपने लिए, मेरे विवेक के लिए ? खैर तुम लोग आओ, मै दरवाजा खुलवाकर उसे तुम सबक आगे कर देता हूॅ। तुम लोग अगर उसे पकड़कर मारो भी तो मुझे कुछ नहीं कहना है।'

अब तक जो लोग उस पापी अभागे की चमड़ी उधेडकर चप्पल बनवाने की घोषणा कर रहे थे, वे ही लोग जल्दी से बोल पड़े, 'रहने दीजिए, आपही जैसा ठीक समझिएगा, कीजिएगा।'

'मैं ही ?'

सहसा रंजीत मित्रा हॅस पड़े। मधुर मोहनी हॅसी। बोले, 'मै क्या अपने दामाद की पिटाई कर सकूॅगा ?'

वे भी फौरन विगलित हसी हसकर बोले, ओर हम लोग ही क्या ऐसा कर सकते है सर ?'

कहने के साथ-साथ इन लोगो ने सोचा-गनीमत है उस समय ये घर पर मौजूद नही थे। तथा बन्द खिड़की के पीछे से किसी ने चेहरा नही देखा है .. गालियो की बौछार करने वालों को कोई पहचानेगा नही। बाद मे अगर बात उठी तो कह देंगे, 'वे लोग बाहरी आदमी थे...न जाने कहॉ के लोफर-नालायको ने यहॉ आकर भीड़ जमा कर दी थी।'

मिनटों में यह सब सोच लिया उन्होंने। यही एक मिनट मित्रा साहब को कनपटी रगड़ने मे बीता।

उसके बाद वे बोले, 'बात तो सही है। तुम लोग ऐसा नहीं कर सकोगे. ..फिर भी भयकर कुछ होना जरूरी था। खैर...कम-से-कम उसे एक बार तुम लोगो के सामने तो करूॅ। सिर झुकाकर माफी ही मॉगे।...नहीं, नहीं, अपना सगा जानकर मै उसे छोड़ूँगा नहीं... माफी उसे मॉगनी ही होगी। इतना बडा अपराध करके बच निकले...यह नहीं होगा।'

जैसे ये लोग ही न्याय-धर्म से करता-धरता हैं....कानून बनाने वाले है, मालिक हैं।

परन्तु मित्रा साहब की बाते सुनकर इन कानून के करता-धरताओं के चेहरे फक पड़ गए। अरे बात रे, अभी तक जो कुछ भी कहा है और जैसा कि पूछताछ होने पर कहने को सोचा था—वह सब तो गड़बडा जाएगा। क्या अन्दर वालों ने अभी तक हम लोग जो कह रहे थे—वह सुना न होगा ? अगर उसी का हवाला देते हुए क्षमाप्रार्थी मुकर जाए तो ? इसके अलावा ईटे फेंककर खिडकी तोड़ी है वह सबूत तो छिपने का नहीं। ओर इनका जो हाल है कहीं पुलिस ही न बुला बैंठें। हो सकता है दामाद को पसन्द नहीं करते है...लेकिन पुलिस का आना तो और भी खतरनाक है। वे खुद भले ही रक्षक होकर भक्षक बनें, इससे कुछ आता-जाता नहीं है, परन्तु अपने हाथो में कानून लिया है, सुनेगे तो बस खैर नहीं। दोषी को छोड़ निर्दोष को धर दबोचेगे। फिर खिड़की का शीशा तोडना, मोटरबाइक का भुर्ता बना देना तो छिपा रहेगा नहीं।

इसीलिए वे जल्दी से बोल उठे, 'नहीं, नहीं, जाने दीजिए, जाने दीजिए।' इसी के साथ चुटकियों में वह जगह खाली हो गई। बिल्कुल मैदान साफ।

रजीत मित्रा उसी साफ-सुथरे मैदान को अद्भुत दृष्टि से देखकर मुस्कुराए फिर यौवनोचित मुद्रा मे कार में चढ़ बैठे। मैन्सन के पीछे जो गैरेजो की कतार है, उसी में से एक को अपना लक्ष्य मानकर बगल वाले गैराज की ओर बढे।

हर खिड़की पर लटकी उत्कठित दर्शकों की भीड-की समझ में बात आई नहीं। गाडी घेराव होने के बाद कुछ भी नहीं हुआ, देखकर वे खिन्न हुए। उससे भी ज्यादा अपने ऊपर उन्हें गुस्सा आया। इस वक्त अगर उतर जाते, इन लडकों से कुछ बातें करते तो दो काम होते। एक तो पता चल जाता कि यह घटना इतनी खामोशी से ठंडी कैसे पड़ गई और दूसरी बात होती कि भविष्य मे रजीत मित्रा के आगे नाक रह जाती।

अब इधर-उधर का बहाना बनाकर सफाई देनी पड़ेगी कि उस समय उपस्थित क्यों नहीं हो सके। अनुमान लगा-लगाकर घटना को समझने की कोशिशें चलने लगीं। रंजीत मित्रा ने इतनी देर तक लड़कों को क्या समझाया होगा ? केवल मुँह की बात खर्च करके इतनी आसानी से ऐसा क्या समझाया जा सकता है कि इतना भयकर तूफान शान्त हो जाए ?

कार गैरेज में रखकर अंगुली मे चाभी की रिंग नचाते हुए रंजीत मित्रा सात नम्बर फ्लैट के सामने आ खड़े हुए। अपनी जेब से ताले की डुप्लीकेट रहने पर भी साधारणतया वे बेल ही बजाया करते हैं। गृहस्वामी का गृहागमन की घोषणा कहा जा सकता है।

आज लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया। जेब की चाभी से दरवाजा खोलकर भीतर घुस गए। घुसते ही पैसेज की बाईं तरफ सर्वेन्ट रूम पडता है और दाहिनी तरफ ड्राइंगरूम। पैसेज पार होते ही काफी जगह है, जिसे डाइनिंग कॅम-ड्राइगरूम बनाया गया है। यद्यपि यह ड्राइंगरूम घरेलू प्रयोग के लिए है। गृहस्वामी यहीं चले आए। देखा खाने की मेज के दो तरफ बादू और मोऊ बैठे हैं और उन दोनो के बगल में उनकी माँ। बैठक में—एक सोफे पर नीता और सुलेखा बैठी हैं एक पर विभास। विभास एक चित्रों-भरी अंग्रेजी पत्रिका के पन्ने उलट रहा था। बाहर की गरजना थोडी शान्त हो जाने के बाद उसने बन्दूक माँगने की जिद्द छोड़ दी थी और गेस्टरूम के डनलोपिलो के गद्दीवाले दीवान पर लेट गया था। ससुर के आ जाने से और उनकी कार का घेराव होने की खबर

पाकर कमरे से बाहर आकर किताब के पन्ने उलटने लगा था। उलटते-उलटते घटो बीत गए—गृहस्वामी का शुभागमन ही नहीं हो रहा था।

इधर खिडकी के उधर भीड़ नहीं है, इस बात का अनुमान लगाकर नीता और स्वाती ने एक खिड़की खोल ली थी। देखा था बाबूजी उन लोगो के साथ लगातार बातें कर रहे थे। उन्हें सुलक्षण जान पडा था। जब से लोग एक साथ उन पर चढ़ाई कर बैठे हैं तब अब किसी तरह का डर नहीं है। मामला जब फिसल गया है तब निपट भी जाएगा।.. बाबूजी को कार गैरेज की ओर ले जाते देखकर वे बच्चों को खाना खिलाने आई हैं।

अन्दर आकर दामाद को देखते ही रंजीत मित्रा का सिर से पॉव तब जल उठा। यूँ ही वे उसे फूटी आँख नही देख सकते हैं, उस पर सुलेखा को दामाद की खातिरदारी करते देख चिढ़ जाते। दामाद का नकचढा रंग-ढग भी उन्हे बरदाश्त नही होता था। अभिजात की मुद्रा और होती है और नकचढ़ापन और। अभिजात बनने के लिए दिमाग ठंडा रखना पड़ता है। खून न खौल पाए रजीत मित्रा आजीवन काल यही कामना करते आ रहे है। और यह बी॰ के॰ घोष अर्थात् विभास कमल, ठीक इसका उलटा है। उनका खून हर वक्त खौला करता है।

इस समय हालॉकि रंजीत मित्रा के खून में हलचल मची थी।...कितने कौशल दिखाकर इन जहरीले नागों को पिटारे में भर डालने पर भी नर्व पर कम दबाव तो पडा नहीं था।

जो लोग हमेशा रंजीत को ‘सर’ कहते रहे हैं और आखिर मे आज भी वह कहने लगे थे, शुरू में उन्हीं लोंगों ने ‘साला’ भी कहा था।...फिर भी वे स्थानाच्युत नही हुए थे। इस समय भी गँवार की गर्दन पकड़कर खूब जमकर पिटाई करने की एकान्त इच्छा का दमन कर, उसकी ओर न देखकर, खाने की मेज की तरफ देखा। अति साधारण स्वरों में बोले, क्या बात है, ये लोग इतनी रात को खा रहे है ?’

कहते-कहते टाई खोलने लगे। मानो कुछ हुआ नहीं है। जैसे आज के ऑधी-तूफान का उन्हें पता तक नही।

इनकी बात का उत्तर किसी ने नहीं दिया। रीता और स्वाति, दोनो माताऍं, बच्चों की थालियों में बहुत ज्यादा कुछ देखने में व्यस्त हो गई। जवाब दिया बादू

ने। बोला, 'वाह आज राक्षस नही आया था ? एवह लोग पूपा को मारने आए नहीं थे क्या ? तभी न जतीन दादा को खाना बनाने मे देर हो गई।'

रजीत मित्रा पोते के और करीब जाकर बोले, 'अरे बाप रे...रा...क्षस ! वह लोग देखने मे कैसे थे ?

बादू बोला, 'देखता कैसे ? जतीनदा ने क्या देखने दिया था ? माँ, बुआ, दीदू ने दिया देखने ? खिड़की बन्द कर दी थी न।'

'ए हे हे, तब तो तुम राक्षस देखने से चूक गए।' कहते हुए वे नातिन को सम्बोधित कर बोले, 'मोऊ, तुमने क्यों नहीं राक्षसों को मार डाला ?'

मोऊ ने मुँह फुलाकर उत्तर दिया, 'कैसे मारती ? तुमने तो बन्दूक छिपाकर रख दी है ? बापी को ही कहाँ मिली ?'

रंजीत ठिठके। पीछे मुडकर एक बार देखा।

विभास पूर्वावस्था में था, सुलेखा एक बुनाई में उलझी हुई थी। नीता यूँ ही बेठी पैर नचा रही थी—निर्विकार निर्लिप्त चेहरा।

रजीता मित्रा ने किसी से कोई बात नहीं की, अपने कमरे में चले गए। इस समय एटैच्ड बॉथरूप से जाकर चालिस पैतालीस मिनट तक नहाऍंगे, उसके बाद दूध-सा सफेद कुर्ता पहनकर दामाद से भी ज्यादा तरुण मुद्रा मे आकर खाने की मेज पर बैठेंगे।

यह किसी ने स्वप्न मे भी नही सोचा था कि इतनी देर तक बाहर रहकर सारा हाल-जानकर रंजीत मित्रा भीतर आकर किसी से एक बात भी नही करेगे।...सभी ने सोचा था कि भीतर आते ही बम की तरह फूट पडेगे...उसी के अनुकूल हर सम्भव प्रश्नो के उत्तर सोच रखे थे सब ने।

दो तरह की बातें सोच रखी थीं—एक-उन पाजी बदमाश लड़कों ने कैसा उत्पात मचाया था इसे अच्छी तरह बताकर उनके बारे में कठोर व्यवस्था करने का संकल्प घोषित करना, दूसरा, विभास कमल की हठ के विरुद्ध कुछ साधारण से विचार व्यक्त करने के बाद अगला क्या कदम उठाया जाए, इस बारे मे परामर्श करना। दोनों तरह की बातें सोची गई थीं। कम-से-कम सास-दामाद तो तेयार बैठे थे।...बन्दूक वाली बात सुलेखा बिल्कुल गोलकर जाना चाह रही थी, नीता, स्वाती का भी यही इरादा था। केवल रीता के इरादे ही साफ-साफ समझ

में नहीं आ रहे थे। रह-रहकर उल्टा-सीधा बक रही थी। बादू और मोऊ बन्दूक की बात जानते है यह किसने सोचा था ? ..छोटे बच्चो की समझ का दायरा कितना है, यह ज्ञान बड़ों को नही है, तभी बडो की असतर्कता की कोई सीमा नहीं रहती है।

विभास मन-ही-मन जल-भुन रहा था। ससुर ने आकर उसे अगर पागल, रास्कल, मूर्ख कहकर डॉटा होता तब यह शायद वह इतना अपमानित न होता यह तो असह्य है।

जब जान लिया कि रंजीत मित्रा बाथरूम मे घुस गए है तब सहसा उन्टा और पत्नी को सम्बोधित करके बोल उठा, 'मोऊ को खिलाकर तुम्हे खाना हो तो खा लो, अब घर लौटना है। काफी रात हो गई है।'

घर लौटना है ?

आज लौटने का प्रश्न उठ सकता है, यह किसने सोचा था ?...अभी थोडी देर पहले ही तो सुलेखा ने रीता के आधुनिक 'बाबूटाइप' नौकर अजीत कुमार को फोन पर बता दिया था कि आज रात को ये लोग नहीं लौटेंगे। मोऊ सो गई है।

सुलेखा है तभी नौकर के आगे नाक रखने को ऐसे बहाने बनाती है। यही पर आकर रीता ने फोन किया होता तो कहती, 'अजीत, आज हम लोग वापस नही आएँगे, तुम बाहर का दरवाजा लॉक करके सो जाओ।'

रीता की जगह पर वह कहने गई थीं तभी...

कहते हुए सोच रही थी कि गनीमत है उन डाकुओ ने टेलीफोन की लाइन नहीं काट दी थी। हालाँकि कहते सुना था, साले की टेलीफोन की लाइन काट दो।'

अब दामाद की घोषणा सुनकर हृदय की धड़कन बन्द होने को आई। मुँह से निकल गया, 'क्या कह रहे हो ? मैने तो तुम्हारे अजीत से कह दिया है कि तुम लोग आज वापस नहीं जाओगे।'

विभास कमल गम्भीर होकर बोला, 'नहीं जाना पड़ेगा।'

सुलेखा व्याकुल भाव से बोली, 'क्यो बेटा ? इतनी रात हो गई है, फिर तुम्हारी गाड़ी भी नही है...'

१३६०५

शहर मे टक्सिया है

'लेकिन जाने की जरूरत क्या है ? शरीर और मन पर आज काफी कुछ बीता है, खाकर यहीं सो जाओ।'

'खाने की बात छोडिए। खाने की स्थिति नही है।'

'जो कुछ खा सकोगे, जरा तो खाओगे,' कहते हुए सुलेखा ने अपनी आशंका व्यक्त की, 'इस समय वे गुन्डे सिर झुकाकर भले ही चले गए हों अगर आस-पास कहीं ताक लगाए बैठे न हों ?'

सुनकर वी. के घोष का हृदय काँप उठा कि नहीं ?

उठा ! यह खतरा उसके मन मे भी था। फिर भी अहंकार दिखाकर बोला, 'तो क्या किया जा सकता है ?'

' .....रीता।'

रीता लड़की को खिलाकर यतीन के जिम्मे कर रही थी ताकि मुँह धुलाकर सुला दे। उसने इशारे से नौकर को जाने के लिए कहा। उसके बाद मेज से हटकर दबी जुबान से व्यंग करती बोली, 'जानबूझकर हँसी मत उड़वाओ कमल। इतनी अगर हिम्मत थी तो फिर शेल्टर में क्यों आ छिपे थे ?'

रीता ने भौहे सिकोडी, 'करेकशन कैसा ? उनके हाथो मे खन होना ?'

विभास क्रुद्ध स्वरों में बोला, 'तुम तो यही चाहती हो।'

रीता सहसा जोर से हॅसने लगी। वह बोली, 'सुन ले नीता, अपने विभासदा की बात सुन। मैं चाहती हूँ, इनका खून हो जाए। अरे बाबा, इससे तो मेरा भी खून हो जाएगा। पर हॉ, दो-चार साल श्रीघर में रह आने में कोई बुराई नहीं है।'

'रीता...यह क्या हो रहा है ?' सुलेखा नाराज होकर चिल्लाई, 'हर वक्त तुम्हारे इस तरह के चुभते मजाक अच्छे नहीं लगते हैं। देख रही है न...बाबूजी आ गए हैं ?'

हालॉकि इन बातों का बाबूजी के आने से क्या सम्बन्ध है यह समझ मे नहीं आया।

नीता बोल उठी, 'सब कोई मिलकर झमेला मत कर रे दीदी, भूख के मारे मेरी ॲतड़ियॉ सूख रही हैं।'

अन्त तक जाना नही हो सका।

'छिपे, मौके की तलाश में बैठे हैं' का डर छाती पर हथौड़े-सी चोट कर रहा था। यथारीति नहाकर गले और गर्दन पर पाउडर की मोटी तह की प्रलेप लगा, सफेद पैजामा-कुर्ता पहन शाही ढंग से डाइनिंग टेबिल पर रंजीत मित्रा बैठे।

इस बात का रंजीत मित्रा को शौक है।

घर के नाप से डाइनिंग टेबिल बड़ी है।

सुन्दर है, कीमती है।

अपने निश्चित स्थान पर बैठकर साधारण आवाज में रंजीत बोले, 'कहाँ, विभास नहीं बैठेगा ?'

मेज पर रीता, नीता, स्वाती बैठ चुकी थीं, सुलेखा बैठेंगी इसका आभास मिल रहा था, क्योंकि उनके निर्दिष्ट स्थान के सामने प्लेट रखी थी। हालाँकि सुलेखा मेज पर खाना खाने पर भी नियम-कानून मानती नहीं हैं, सबको परोसने के बाद अन्त में बैठती है।

बाप के पूछने पर नीता सक्षेप मे बोली, 'विभास को भूख नहीं लगी है।'

'अरे ! बडे आश्चर्य की बात है। क्या इतनी-सी भूख नहीं कि मेज पर बैठे ? लेट गया है क्या ?'

'नहीं, मोऊ सोना नहीं चाह रही है इसीलिए उसके पास हैं।'

रंजीत मित्रा ने खुली आवाज मे पुकारा, 'विभास, अरे भई अभी कैसे सो गए ? अरे. कुछ तो खाओ ! आओ, आओ....'

सबने आश्चर्य से देखा।

और दिनों और आज के दिन मे कोई अन्तर नहीं है। गले की आवाज तो वैसी ही है। तब क्या गुण्डों ने वास्तविक घटना के सम्बन्ध में कुछ कहा नहीं है ? बादू के बताए राक्षस के किस्से को किस्सा समझ रहे हैं क्या ?

गले की आवाज सुनकर विभास भी चौंका। कमरे से यंत्रचलित-सा निकल भी आया।

रंजीत पत्नी की ओर देखकर बोले, 'सुबह ऐसा क्या खिलाया है जो इस वक्त खाना नहीं खाएगा ? दामाद पर प्रेम बरसाते वक्त जुल्म नहीं करना चाहिए। खैर, बिल्कुल न खाना ठीक नहीं होगा, कम-से-कम चिकन तो खाओ।'

दामाद के मौन को सुलेखा ने स्वीकृति समझ कृतार्थभाव से जल्दी-जल्दी प्लेट रखी। खाना परोसा। विभास कुर्सी खींचकर पुराने सिद्वान्त का हवाला देते हुए बोला, 'खाने की इच्छा नहीं थी...'

रंजीत मित्रा ने उसकी बात का उत्तर देकर कहा, 'रीता, तू भी तो ठीक से नहीं खा रही है।'

रीता शान्त भाव से बोली, 'खा तो रही हूँ।'

अब विभास कमल को लगा कि खाने के मामले मे इतना कुछ बेकार ही कहा। भूख अच्छी-भली लगी है। रंजीत मित्रा के स्वाभाविक कण्ठ-स्वर ने शायद पाकस्थली को और भी ज्यादा स्वाभाविक बना दिया था। अब प्राण जाए तो जाए, मान बचाने के लिए खाया नही जा सकता है। कहना ही पड़ा, 'अब खाया नही जा रहा है।'

रजीत मित्रा भी फौरन बोल उठे, 'हालॉकि न खा सकना ही स्वाभाविक है. .रहने दो, जबरदस्ती नहीं करूँगा। अच्छा, तुम्हें क्या लगता है वह लड़की बिल्कुल ही खत्म हो गई थी ?'

यह क्या ? इस तरह से ऐसा प्रश्न ?

मेज पर जैसे भूकम्प आया।

विभास कमल पानी पीने के लिए जो गिलास उठाया था वह हाथ में ही रह गया। गिरकर झमेला नहीं बढ़ा यही क्या कम है।

जवाब नीता ने दिया....हालाँकि प्रश्न ही पूछा, 'तुमसे उन लोगो ने यह नहीं बताया है बाबूजी ?'

रजीत मुस्कुराकर बोले, 'जानते तब न बताते। उसे हुआ क्या यह देखने गया ही कौन ? जो ज्यादा जरूरी काम था वही किया ? अपराधी को भागने नहीं दिया।'

उनकी बाते किसके पक्ष में कही गई समझना मुश्किल है। ओर ऑख उठाकर मुँह की तरफ देखने का साहस था नहीं।

अतएव परिवेश स्तब्ध।

रंजीत मित्रा बोले, 'मुश्किल तो यह है कि किस अस्पताल में ले गए है, वे लोग यह भी नहीं बता सके। कल सुबह शशि से पूछकर सब पता करना

होगा। बिल्कुल मरी न हो तो कुछ आशा है...लेकिन मर गई है तब परेशानी होगी। जिन्दा रही तो उसके ट्रीटमेन्ट के लिए यथसाध्य रुपया-पैसा देकर...'

रीता ने मुँह उठाया। बोली, 'साफ-साफ कहते क्यों नहीं कि घूस देकर।

रजीत मित्रा की तेज दृष्टि बड़ी बेटी पर पडी। उसकी ओर देखकर बोले, 'नहीं, इसे घूस नहीं कह सकती हो। लेकिन खत्म हो गई होती तो फिर बात अलग...हालॉकि ऐसे भी केस मैं जानता हूँ...बाबू के हाथ का थप्पड़ खाकर नौकरानी का बेटा मर गया, केस सामने आया, उसी नौकरानी ने कोर्ट में कह दिया, मेरे लड़के को मिरगी की बीमारी थी, यूँ ही गिरने से मर गया। उसके पीछे कौन-सी बात थी, समझ लो।'

रीता बोली, 'समझ रही हूँ बाबूजी और बहुत कुछ समझ गई हूँ पर सोचती हूँ, 'मेरी मोऊ को अगर कोई...'

'आः रीता', सुलेखा धमकाते हुए बोली, 'तू क्या सोचती है जो जी मे आया बक देने में ही बहादुरी है ? चुप रह।'

रीता धीरे-धीरे बोली, 'तब से चुप ही तो हूँ मॉ। बहादुरी दिखाने की हिम्मत होती तो जिस वक्त वे लोग कह रहे थे 'खूनी को बाहर निकाल दीजिए' तभी मैं दरवाजा खोल देती।'

लड़की के झुके हुए चेहरे की ओर देखते हुए रंजीत मित्रा बोले, 'खोल देना कोई बुद्धिमान का काम न होता। जब बन्दूक उठाने तक की नौबत आ गई थी तब तो लगता है बात बहुत मामूली नहीं थी।'

'मामूली ?'

अब सुलेखा का मुँह खुला, 'मामूली था...हूँ ! तुम्हारा भाग्य अच्छा था जो उस समय यहॉ थे नहीं। उन गुण्डों ने अपने दोषों के बारे में तो कुछ बताया न होगा।'

'अपने दोष की बात ?'

रंजीत साहब ठहाका मार के हॅसने लगे।

हॅसते हुए बोले, 'अपने दोष की बात क्या किसी से कहते सुना है तुमने ? अब विभास को ही ले लो...वह क्या लोगों से कहता फिरेगा कि उससे दोष हो

गया है ? खैर जाने दो, अब देखना यह है कि पुलिस-केस न हो। यह साबित करना होगा कि लड़की दौड़कर खुद ही बाइक के सामने आ गई थी......हालाँकि यह भी निर्भर करता है उस लड़की की हालत पर।'

पल भर के लिए चुप हुए। सदा के अभ्यास के अनुसार थाली साफ कर उसके बीचों बीच एक संख्या लिखी फिर उठकर खड़े हो गए। और तभी अनायास ही बोले, 'फिर भी इस बार रुपए-पैसे से मुँह बन्द भले ही कर दिया जाए, भविष्य मे सावधान होना पड़ेगा। ज्यादा ड्रिंक करके गाड़ी चलाना ठीक नहीं है।'

भूकम्प नहीं, समस्त स्थान पर एक भयंकर बज्राघात करके चले गए रजीत मित्रा।

शशि की बीवी विलापकर रही थी, 'अरे माँ रे ! मेरी सोने-सी बेटी। उस पर कौन पिशाच गाड़ी चढ़ाकर चला गया रे ? भगवान क्या इसकी सजा उसे नहीं देगा ?'

शशि कल शाम से सारी रात यह विलाप सुनता आ रहा है, अब तड़के-सुबह जरा आँख लगी ही थी कि फिर वही रोना। शशि उठकर बैठते हुए खीज कर बोला, 'फिर तूने बिलखना शुरू कर दिया ? कह रहा हूँ जान बच गई है फिर भी...'

'अरे माँ रे, तुम तक दानवो जैसी बातें कर रहे हो ? जान से बची है तो क्या दोनों टाँगें तो जीवन-भर के लिए चली गई ?'

क्रुद्ध स्वरो में शशि बोला, 'चली तो गई ही है। कह तो रहा हूँ, गई है। अमीरों की गाड़ी के चक्के के नीचे गरीबों की छाती कुचले...यही तो विधाता का नियम है इसकी खैर मना।'

'खैर मनाऊँ ? कटे पैरो वाली लाबी की शादी होगी ? लाबी फिर कभी पाँच लोगों जैसी हो सकेगी ?'

'तेरे हाथ जोडता हूँ लाबी की माँ, चुप हो जा। पहले लड़की जिन्दा रहे, उसके बाद और बात करना। अगर कानून है, धर्म नाम की चीज है तब यह बड़े आदमी का दामाद, चुपचाप नाक रगड़ता आएगा और उड़ गए इन पाँवों का दाम देने को मजबूर होगा।'

आखे पोछती हुई शशि की बीवी बोली, कानून क्या ऐसा कहता है ?

'कहता है', शशि बोला, 'लेकिन करता है या नहीं, यह नहीं मालूम।'

ठीक उसी वक्त बाहर से किसी की आवाज सुनाई पड़ी, 'घर में कोई है ?'

इतने तड़के, अभी पाँच तक नहीं बजे थे, कौन आ सकता है ? शशि चौक उठा। डर के मारे उसके हाथ-पॉव कॉंपने लगे। गला सूख गया।

जल्दी से उठकर दरवाजे के पास गया।

लेकिन किसके सामने खड़ा हुआ जाकर ?

शशि की दुकान के सामने बड़े-बड़े आदमियों को आकर खड़ा होना पड़ता है, कारण—शशि का ढीलापन। लेकिन शशि के इस ईट-गारे की दीवालों और टीन की छत वाले घर के सामने कब राज-आगन्तुक आकर खडा हुआ है ?

शशि भौंचक्का-सा बाप-बेटी का मुँह देखता रह गया। हाँ, शशि इन्हे पहचानता है। नल की टोंटी बदलने के लिए, सिस्टर्न ठीक करने या पानी का पाइप टूटने पर शशि सभी फ्लैटों मे जाया करता है। और यह लड़की ? हर रोज अपने मियॉ के पीछे बैठे आया-जाया करती है। शशि ने कल भी तो देखा था दुकान के सामने से जाते। परन्तु हॉ, कल जब शशि की पसलियों को तोड़ते हुए वह भंयकर गाड़ी चली गई तब यह लडकी उस पर सवार नहीं थी।

शशि के मन में बहुत सारी बाते इकट्ठी थीं, परन्तु उन्हें मुँह पर नहीं लाया। बस, बोला, 'आप लोग ? यहाँ ?'

रंजीत मित्रा ने गम्भीर हास्य का सहारा लेते हुए कहा, 'जरूरत पड़ने पर हाथी भी मेंढक के बिल में जाता है शशि।'

शशि यह बात सुनकर सख्त पड़ गया, यही स्वाभाविक था। सूखी आवाज में बोला, 'यही तो देख रहा हूँ।'

इससे पहले कि रंजीत मित्रा कुछ कहते, रीता उनके पीछे से निकलकर सामने आ गई। व्यस्त भाव से बोली, 'शशि, तुम्हारी लड़की का क्या हाल है ?'

शशि घर में है और नींद से उठकर आया है देखकर रीता के मन में आशा का संचार हुआ था इसीलिए साहस कर आगे बढ़ आई थी, वरना पहले तो डर के मारे पिता के पीछे छिपी थी। जब कि रीता के ही प्रयासों के कारण केयर-टेकर से शशि का पता लेकर इतने तड़के आना हुआ था। उसी ने पता

ढूढने का यह रास्ता सोच निकाला था शशि ने रीता की व्याकुलता को महत्त्व नही दिया। लापरवाही जताते हुए बोला, 'हाल क्या होगा ? जैसा आपने रखा है वैसी ही है।'

सुनकर रीता बुझ-सी गई। चुप हो गई। वह दोबारा पिता के पीछे चली गई...या पिता उसके सामने आ गए...क्या पता। अब रंजीत मित्रा ने बात की। अनुशासित और कड़े स्वभाव के व्यक्ति हैं। व्याकुलताहीन स्वर मे बोले, 'गलती हो गई है यही स्वीकार करने के लिए ही तो मेढ़क के बिल में आया हूँ शशि। तुम मेंढ़क जैसा व्यवहार न करो तो कई हर्ज है ? आखिर रोजी-रोटी का धधा तो फिर से करना ही होगा न ? हंगामे में फँसने पर पेनाल्टी देना पड़ती है, जानता हूँ। परन्तु तुम्हारी बेटी का हाल जाने बगैर समझूं कैसे कि कितनी पेनाल्टी देनी होगी ?'

मन में शशि के आया कि कहे कि घूस देकर मुँह बन्द करने आए है ? लेकिन ऐसा कर न सकेंगे...में आपके लाडले दामाद को कोल्हू में न जुतवा दूँ तो मेरा नाम शशि नहीं।

पर जो कुछ कहने की इच्छा होती है उसे क्या एक ज्ञान-सम्पन्न या दुनियादार इन्सान कह सकता है ? शशि ने क्षण-भर मे बहुत कुछ सोच लिया।

जिनके हाथों में 'मुँह बन्द' करने की चाभी है, वे यहाँ ताला न बन्द कर सके तो अन्यत्र बन्द कर आएँगे। आर. के. मित्रा के दामाद बी. के. घोष को कोल्हू में जोत सकने की क्षमता क्या शशि में होगी ? बल्कि इस समय नरम पड रहा है, हाथ रगड़-रगड़कर कुछ ज्यादा ही वसूला जा सकता है। और नरम ही कहाँ है ? कह तो दिया है कि बहस और कानून का सहारा लिया तो रोजी-रोटी पर आ बनेगी। शशि को याद आई वह कहावत 'पानी मे' रहकर मगरमच्छ से बैर।'

इसीलिए शशि उदारभाव दर्शाते हुए बोला, 'जिन्दा है, बस इतना ही कहा जा सकता है, दोनों पैर बुरी तरह से कुचल गए हैं...लगता है काटकर फेंक देना पड़ेगा।'

रंजीत मित्रा ने दोस्ताना लहजे में कहा, 'नहीं, नहीं शशि ऐसा शायद न करना पडे। आजकल बहुत अच्छे-अच्छे इलाज चले हैं। एकमात्र मृतक को

जिलाने के लिए डाक्टर लोग सब करते हैं। हाँ, रुपया तो लगेगा ही, वह मैं दूँगा। इस वक्त तुम अपने पास कुछ रखो, उसके बाद डॉक्टरों से सलाह करो। उनसे कहना, खर्च की चिन्ता न करें, सबसे अच्छा इलाज करे।'

सुनकर शशि विह्वल हुआ।

शशि को लगा, इन्हे जितना हृदयहीन सोचा था उतने ये हैं नहीं। पछतावा हुआ है इन्हें। इनके पास हृदय है। शशि की ऑखें भर आई। अपनी धोती की खूँट से ऑखें पोंछता हुआ बोला, 'दुनिया की खबर आप ही लोग अच्छी तरह से रखते हैं सर, जैसे कहेगे होगा।'

रंजीत बोले, 'किस अस्पताल के किस बेड पर है, मुझे बता दो, मैं एक बार जाकर देख आने की बात सोच रहा हूँ।'

यद्यपि इससे पहले ये बात उनके जेहन में थी नहीं, क्योंकि वे तो यही सोचकर आए थे कि मर-खप गई होगी। अब जब मालूम हुआ जान से नही मरी है तब वे क्यो कठोर बने ? शशि की बेटी के प्रति कृता हुए। हालॉकि एक बार तो हर साल में जाना पडता, सरेजमीन खोजबीन करने तो जाना ही पडता।

शशि बोला, 'बॉग्ड़े में ले गए हैं सर....नम्बर मेरे पास लिखा है, ला रहा हूँ. .'

मित्रा साहब ने पूछा, 'कौन ले गया था ?'

शशि ने कातर स्वरो मे जो कहा उसका संक्षिपतसार था, रास्ते से जा रहे एक सज्जन, शशि उन्हें पहचानता नहीं है, उन्होंने जल्दी से टैक्सी बुला, शशि को साथ लेकर...इत्यादि। यह भी बताया उसने कि मॉ रो-रोकर मर रही थी। बाद में रिक्शे से जाकर देख आई है। उसे भी नहीं रहने दिया। हर रोज रिक्शे से जाएगी-आएगी तब तो तीन रुपए कम-से-कम खर्च हो ही जाएँगे। शशि कहाँ से इतने पैसे लाएगा ? पर यह नासमझ औरत समझना चाहे तब न ?...लड़की भी तो यही अकेली है...एकलौती सन्तान....जान छिड़कती है उस पर।

एकलौती सन्तान ! सुनकर रीता का हृदय रो उठा। रीता जल्दी से बोल उठी, 'अच्छा, न हो, रिक्शे के किराये के लिए' कहते हुए पर्स का जिप खोल डाला उसने।

रंजीत मित्रा मृदु गम्भीर स्वरों में बोले, 'तू क्यों व्यस्त हो रही है रीता ? मै तो तैयार होकर ही आया हूँ।'

रीता ने उससे भी ज्यादा आवाज धीमी की। बोली, 'फिर भी बाबूजी, मैं कुछ तो दूँ....कायदे से पूरा का पूरा उसे देना चाहिए, तुमने ही जान-बूझकर अपने मत्थे मोल लिया है।'

रजीत मित्रा हँसकर बोले, 'जिसकी गर्दन ज्यादा मजबूत होती है, जिम्मेदारी उसी की ज्यादा होती है। रीता। खैर जब तुम्हारा दिल चाह रहा है तब दे दो।'

रीता ने पर्स में से दो सौ रुपए के नोट निकाले, बड़े और छोटे नोट मिलाकर। शशि के हाथ पर रखते हुए बोली, 'तुम्हारी पत्नी के पास रख दूं। रिक्शे-विक्शे के लिए...'

शशि ने हाथ बढाकर रुपया ले लिया। उसने देखा, साहब भी अपनी जेब में हाथ डाल रहे है। उसे अनदेखा करते हुए जल्दी से बोला, 'जाऊँ, नम्बर ले जाऊँ।'

चला गया। शायद इकट्ठा दोनों से लेते शर्म आई।

उसके जाते ही रंजीत मित्रा बोले, 'ओफ, लड़की ने मेरी इज्जत रख ली।'

'लेकिन बाबूजी, अगर दोनों पॉव कट गए ?'

रंजीत मित्रा अनायास ही बोल सके, 'भाड में जाए। हर रोज न जाने कितने हाथ-पॉव कट रहे हैं, रख सकोगी सबका हिसाब ? अपना सिर नही कटा, यही खैर मना।'

रीता बाप का मुँह देखने लगी।

सहसा रीता का मन तुलना करने लगा। उसे लगा, जानवर और पिशाच के बीच बड़ा, छोटा, कम, ज्यादा निर्णय करना सम्भव नहीं।'

शशि ने आकर कागज का एक टुकड़ा दिया।

रंजीत मित्रा ने उसे बिना देखे ही जेब में रख लिया फिर दूसरी जेब से हजार रुपये के नोट की गड्डी निकाल कर दी। बोले, 'इसे रखो, बाद में जब जैसा....'

लाए तो उससे पॉच गुना ज्यादा थे, परन्तु पूरी जान के लिए जितना मूल्य चुकाया जा सकता है, उतना सिर्फ दो पैर के लिए तो नहीं दिया जा सकता हे न ? इसके अलावा, अभी तो बार-बार देना पड़ेगा। इससे फायदा यह है कि कृतज्ञता की आग उसमें हर समय सुलगती रहेगी।

शशि जब समझ न सका कि क्या करे तब उसने रुपये की गड्डी सिर से छूआते हुए कहा, 'मालिक आशीर्वाद करते जाइए, उसके दोनो पाँव न जाएँ। एक मे कुछ कम जख्म हुआ है...'

रीता के मुँह से निकला, 'दोनो ही पाँव ठीक हो जाएँगे। सुना तो आजकल डॉक्टरी विद्या काफी तरक्की कर गई है।'

इस झूठे आश्वासन में प्राण फूँकने जैसी कोई बात नजर नह आई। जिसने सुना वह चुप रहा। जिसने कहा उसके भीतर से भी कोई आवाज न आई। फिर भी हर सामाजिक गृहस्थ इन्सान ऐसी ही प्राणहीन बाते करता है।

कुछ देर तक खामोशी से गाड़ी ड्राइव करने के बाद रंजीत मित्रा बोले, 'तू सुबह ही चली जाएगी क्यों ?'

रीता बोली, 'ऐसी ही तो बात हुई .'

'सो तो हुई', पितृहृदय का स्नेह लिये बोले मित्रा साहब, 'पर कल बहुत झमेला हो गया, रात को भी कुछ तूने खाया नहीं था.......माँ के पास से खा-पीकर..'

'नहीं बाबू, नहीं। इसके अलावा कमल को दफ्तर भी तो जाना है।'

'अरे, उसने तो कहा आज नहीं जाएगा ?'

'नही जाएगा ?' रीता के चेहरे पर व्यंग की सूक्ष्म रेखाएँ उभर आई, 'क्यो ? अनुताप दिवस पालन करेगा क्या ?'

पिता हँसने लगे, 'उसे तू बहुत तग करती है रीता...मेरे कहने का मतलब है अवज्ञा उसे सेंठती नहीं है तू...'

रीता चुप रही।

थोड़ी देर बाद बोली, 'इस मामले में तुमने कभी मेरे दुःख को समझने की कोशिश की है बाबू जी ?'

बाबूजी और हँसे, 'समझने की कोशिश करने से ही मुसीबत बढ़ेगी। सभी के पॉव तो कीचड़ में पड़े हैं।'

हाँ, इस तरह के भाववाचक, गहरे अर्थवाही अनेक शब्दों का प्रयोग करना मित्रा साहब जानते हैं। रीता ने एक गहरी साँस छोड़ी।

बाप भाइ और पति उम्र बढने पर पुत्र स्त्री जाति की प्रतिष्ठा इन्हीं से है। वहाँ अगर श्रद्धा न रही तो कितना दुःख होता है। हालाँकि बड़े भाई को रीता श्रद्धा करती है, फिर भी उस श्रद्धा के पीछे छिपी है ईर्ष्या। भइया केवल रीता-नीता के भइया ही नहीं हैं, स्वाति नामक महिला के पति भी तो है।

तभी मित्रा साहब हँसते हुए बोल पड़े, 'मुझे तो लगा कि शशि की लडकी का काम एक पॉव से भी चल जएगा, जब कि तू पॉव के लिए जी खोलकर आशीर्वाद दे आई है।'

रीता ने गर्दन घुमाकर बाप का चेहरा देखा, फिर कड़ुवाहट भरे शब्दों मे बोली, 'बाबूजी, गरीब का मजाक उड़ाने में कोई बहादुरी नहीं है...यह तो कुछ वैसा ही हुआ जैसे मुर्दे को गोली मारने से होता है। तुम्हारे भी बाल-बच्चे हैं, उनका भी कभी किसी क्षण एक्सीडेन्ट हो सकता है...'

रंजीत मित्रा की गाड़ी दीपक मैन्सन के गेट के सामने आ गई थी। बेटी की हल्के हाथ से पीठ ठोंकते हुए बोले, 'ऊँहू, तू भी अपनी मॉ कि तरह सेन्टीमेन्टल होती जा रही है। पहले तो तू ऐसी नहीं थी ?'

इससे पहले कि रीता कुछ कहती, गाड़ी गेट के अन्दर घुस गई।

शशि की बीवी ने पूछा, 'वताया नही तुमने....कितने रुपए ?'

शशि बोला, 'ठहरी बाबा, एक बार और गिनकर देखने दो, दिमाग गडबड़ा जा रहा है।'

दोबारा गिनने के बहाने, शशि बीवो को सही रकम बताना नहीं चाहता था। बड़े आदमी की मर्जी, ताजा-ताजा पछतावा था, दे दिया है, लेकिन आगे भी ऐसा करेंगे, इस बात की क्या गारन्टी है ? बहू का क्या है, रुपए पाते ही खर्च करने बैठ जाएगी या चल देगी अपनी सहेलियों से बताने। इस बार घर एक ही ऑगन वाले घर मे शशि की बीवी की सहेलियॉ तो हैं ही। उन्हीं के पति शशि के मित्र है।

उन लोगों ने कल काफी बहसें की थीं और शशि से कहा था कि बड़े आदमी के दामाद के नाम मुकदमा ठोंकने को। शशि लड़की को अस्पताल में पहुँचा आने के बाद इन सबसे बोला था, 'मेरा तो दिमाग ठीक नहीं है, तुम्हीं लोग मुकदमा ठोंक आते...' इस बात पर मामला ठडा पड़ गया था।

परन्तु शशि के मन मे एक सन्दह है राह चलते जिन सज्जन ने टैक्सी पर आहत बेटी को ले जाकर अस्पताल पहुँचाया था उन्होने वहाँ क्या लिखवाया होगा ? शशि की अक्ल कहती है इसी से पुलिस को खबर हो जाएगी।

अस्पताल में रोगी भर्ती करना क्या आसान बात है ? कितनी खुशामद करनी पड़ती है, कितनी पकड-धकड़, और भी जाने क्या-क्या। अभी 'मर जाएगी' कहकर जब उन महाशय ने डराया तब जाकर तो...

'बोलते क्यो नहीं हो जी ?' शशि की बीवी बोली।

लाचार होकर शशि को कुछ कहना ही पडा। टालते हुए बोला, 'बताया तो, लड़की रिक्शे के किराये के नाम पर दो सौ दे गई है और बाकी...यही मिला-जुला कर हजार के आस-पास होगा।'

शशि की बीवी नाराज होकर बोली, 'तो मुट्ठी में क्यो छिपा रखा है ? देखने दो न एक बार...हाथ मे लेकर देखूँ।'

'ये देख न...रुपये हैं कोई देवी-देवता तो नहीं कि दर्शन करने से पुण्य मिलेगा।'

शशि की बीवी बिगड़ते हुए चिल्लाई, 'देवी-देवता से बढ़कर ही तो है। देखने से पुण्य तो मिलेगी ही। इतनी उम्र हो गई, कभी इतने रुपये हाथ मे उठाकर देखा है मैंने ?'

'तब ले देख।' कहते हुए शशि ने चालाकी से दो सौ रुपये गोद मे डालकर बाकी रुपये बढ़ाते हुए कहा, 'ले पकड़। हाथ से छूकर स्वर्ग सिधार जा। तेरा आदमी तो तुझे एक साथ इतने रुपये नहीं दिखा सका पर तेरी सन्तान ने दिखा दिया।'

सुनकर शशि की बीवी छटपटा उठी। रुपये पति की गोद में फेंककर रोने बैठ गई, 'अरे माँ रे...मेरी सोने की बेटी, तुझे जिस राक्षस ने खत्म किया है, भगवान करे उसका सर्वनाश हो, मेरी तरह उसकी भी छाती फटे। रुपये देकर हमे बेवकूफ बनाने आया है, माँ की जान क्या रुपये देखकर भूलती है ? हाय रे मेरी बेटी, आकर अपने अर्थ-पिशाच बाप को देख जा...रुपये पाकर...'

'तू चुप करेगी ?' शशि ने कड़ाई से कहा, 'रुपये का नाम मुँह पर लाएगी तो तुझे ले जाकर कालीघाट की गगा में डुबो आऊँगा। चुप रह...लाबी को देखने

जाना तो पूछ आजा उसे कुछ चाहिए तो नही। बाद में खरीद देना।' शशि की बीवी बोली, 'किससे पूछूँगी ? लाबी को होश है कहाँ ?'

'आज होश में आ जाएगी।'

कहकर शशि ने बात बदल दी।

शशि नही चाहता है कि अभी सारा मोहल्ला रुपयों की बात जान जाए वह अपनी बीवी की तरह भावुक नही है।

उसकी पत्नी ने आँसू पोंछते हुए कहा, 'उसकी इच्छा पूरी करने की बात कर रहे हो ?'

बात पूरी हुई नहीं कि फिर फफक उठी, 'उसे क्या खरीदकर दूँगी ? इस बार बेचारी ने बड़े प्यार से जिद्द की थी कि फ्लैट की लड़कियों की तरह सफेद मोजा ओर रंगीन जूता लेगी...'

शशि गुमसुम बैठा रहा। उसकी लड़की की यह इच्छा तो इस जीवन मे पूरी होने से रही।

शशि की बेटी मरी नहीं है, सुनकर जिस तरह से दीपक मैन्सन के बहुत लोग निश्चिन्त हुए थे, उसी तरह से कुछ लोग इस खबर से क्षुब्ध भी हुए थे।

मरती तो उसी स्थान पर पिस गई होती तो इस विभास कमल को कैसी सजा मिलती यही तो देखने की चीज थी...सुनने में आ रहा है कि दोनों पाँव जख्मी हो गए है...इसके लिए क्या सजा मिलेगी भला ? बहुत हुआ, क्षतिपूर्ति। वह भी कोई घर की कमाऊ औरत नहीं थी कि उस बात का ध्यान रखते हुए क्षतिपूर्ति के लिए पैसे तय होते।...बहुत हुआ तो पालतू कुत्ते को कुचलने वाला हाल होगा।

इसी दीपक मैन्सन के कपूर साहब ने, अपने कुत्ते मिन्टो को दबाकर जख्मी करने के अपराध में, पड़ोसी गगन चटर्जी से दो हजार रुपये क्षतिपूर्ति के नाम पर वसूल लिया था। कहा था, 'इनवैलिड कुत्ता लेकर वे क्या करेगे ? उन्हे तो उसकी जगह पर दूसरा कुत्ता लाना पड़ेगा...और लाएँगे तो खानदानी ही लाएँगे।'

हालाँकि इन्सान बता नहीं पाता है कि अपने किसी इनवैलिड को लेकर वह क्या करेगा। इसीलिए क्षतिपूर्ति कैसे निश्चित हो यह कहना कठिन है। पैसा

देकर क्षतिपूर्ति करने में रख क्या है ? फिर सारा पैसा विभास कमल ही क्या देगा ? उसकी नाव तो मजबूत खूँटे से बँन्धी है।

बात तो ठीक ही थी, मजबूत खूँटे से तो बाँधा ही था। इसीलिए इनवैलिड मोटर साइकिल का यहीं छोडकर बीवी और लड़की के साथ अपने घर चला गया विभास कमल।

रजीत मित्रा दामाद को कोई खास लिफ्ट नहीं देते हैं, इसीलिए सुलेखा को लिफ्ट देना पड़ता है। उनकी राय है कि लडकी की शादी कुछ देख-सुनकर की है, कोई लडकी ने अपनी पसन्द से शादी की नहीं है, अब अगर वह तुम्हारे मनमाफिक तरक्की न करे तो यह तुम्हारी लड़की की किस्मत।...वरना आज भी एक मोटर नहीं ले सका है। मोटर साइकिल लिये फिरता है। जबकि यही पढाई संजीत ने भी पढी है, दोनों क्लासफेलो थे, संजीत आज कितने ऊपर पहुँच गया है। इन्जीनियर की उन्नति उसके काम पर निर्भर है, यह कोई सरकारी सीढी तो है नहीं।...खैर जब दामाद बीवी-बेटी के साथ ससुर की मोटर पर बैठकर दीपक मैन्सन से निकला तब बहुतों के चेहरे खिडकियो से दिखाई दिए।

अपने घर पहुँचकर विभास कमल ने अपना असली रूप धारण किया। ससुराल में उसका आदर काफी होता है, हमेशा अनुनयपूर्वक आमन्त्रित किया जाता है। फिर भी, वहाँ जाने के बाद एक सूक्ष्म अपमानबोध भीतर-ही-भीतर सुई-सा चुभा करता है। क्यो, यह वह नही जानता है। लेकिन यही सूक्ष्म जलन उसके सारे मन को कड़ुआ कर देती है।

इसीलिए जितनी बार वह ससुराल से लौटता है उसका मिजाज बिगडा रहता है। आते ही बिलावजह अजीत को डॉटता, मोऊ पर बिगड़ता और रीता के साथ एक ठंठी लड़ाई चलती।

यूँ भी, आज की तो बात ही और है। उस पर जब से सुना था कि शशि की स्त्री की लडकी जिन्दा है तब से अपना अपराधबोध हल्का होने के बाद से पिछले दिन जो-जो अपमान हुआ था, आज वह सब अन्याय, भयकर अन्याय जान पड़ रहा था। ओफ्फ, कल की वह गन्दी गालियाँ। वह सब तो ससुराल के मुहल्ले की देन है। उस पर स्वंय ससुर की निलिप्त उपेक्षा, और तीक्ष्ण कठोर व्यग्य।

अतएव घर में घुसते ही रीता ने जो पूछा, 'सचमुच क्या दफ्तर नहीं जाओगे ?' तो वह बम के गोले-सा फट पड़ा। इसी एक मामूली सी बात पर फट पडा।

रीता ने ताक कर देखा कि मोऊ आते ही अजीत के पास चली गई। एक तो पूरे एक दिन की जुदाई, उस पर पिछले दिन का भयावह अनुभव का बोझ, उसे दिल से निकाले बगैर मोऊ जूता-मोजा तक उतारने को तैयार न होगी।

रीता पर्स को यथास्थान रखते हुए निरुत्ताप स्वरों में बोली, 'कैसी आश्चर्य की बात है कमल, तुम बिलावजह क्यों नाराज हो रहे हो ?'

'बिलावजह ?'

विभास कमल सामने की सेन्टर टेबिल पर एक घूँसा मारते हुए बोला, 'बिलावजह ? जानती हो-कल से मेरे नर्व पर जो दबाव पड़ रहा है, और कोई होता तो उसको हार्ट-अटैक हो जाता।'

रीता दूसरे सोफे पर बैठ गई।

कुशन उछलकर पुनः स्थिर हो गया। यह सब चीजें रीता को शादी में बाप ने दिया था। बहुत कीमती हैं।

प्रायः रीता हँसकर कहती है, 'अपने ससुर से तुम्हें जो कुछ भी मिला है कमल सब कीमती चीजें हैं। इस समय रीता बैठकर बोली, 'मेज कॉच की है कमल।'

इस बात पर ध्यान न देकर व्यंग्य करते हुए विभास कमल बोला, 'सुबह-सुबह पिता-पुत्री जाकर क्या कर आए ?

शशि मिस्त्री के पॉव पकडकर माफी माँग आए ?'

रीता ऑखें बड़ी-बड़ी कर बोली, 'बस इतना ही ? सुखी माफी की भला कोई कीमत है ?'

'तब फिर घूस देने गई थी।'

'चलो, बात तो समझ में आई। समझते तुम सब हो कमल, लेकिन बड़ी देर से।'

यह भगिमा, बाप से मिली है रीता को।

असहनीय।

विभास ऊँची आवाज मे बोला, 'कितना गॅवा आई ?' रीता पॉव नचाते हुए बोली, 'मैने तो बहुत कम। बाकी दिया है तुम्हारे धनी ससुर ने। एवं भविष्य मे और देने के लिए प्रॉमिस कर आए है।'

'ओ।'

मुँह तिरछा कर विभास कमल बोला, 'तो कुल मिलाकर मिस्त्री की बेटी की कीमत क्या निश्चित हुई ?'

'ये बात अभी कैसे तय हो सकती है ? उसके हर तरह के इलाज का खर्च उठाना पड़ेगा।'

'ओ ! और अगर मिस्त्री कहे, कि उसकी कीमती लड़की की ट्रीटमेन्ट यहाँ नहीं होगा, फारेन ले जाना पड़ेगा तब ?'

रीता सहज भाव से बोली, 'अगर ऐसा साहस शशि करता है और कानून उसकी माँग का समर्थन करेगी तब फिर वह भी करना पड़ेगा।'

'ओ....कानून।'

कड़ुआहट भरे शब्दों में विभास कमल बोला, 'देश में कानून नाम की कोई चीज होती तो कल गुडे लौडे अभी तक जेल के बाहर न रहते।'

अब रीता गम्भीर हुई। गम्भीर हँसी हँसकर बोली, 'कानून अगर तुम्हारे हाथों मे होता तब जरूर बाहर नही रहते, लेकिन तुम्हें क्या लगता है कि ऐसा कुछ तुम्हे मिलना नहीं चाहिए था ?'

'ऐसा कुछ ?'

उत्तेजित विभास कमल उठकर खड़ा हो गया, 'सचमुच खून करने पर भी ऐसा कुछ...'

रीता बोली, 'तुमने क्या सचमुच खून नहीं किया है ?'

विभास कमल की आवाज में कड़ाई थी, 'इसके मतलब ?'

'मतलब समझना क्या बहुत जरूरी है ?' रीता बोली, 'शशि की लड़की बेवकूफों की तरह अधकटी जिन्दी बच गई है इसीलिए क्या तुम्हारे किए गए खून को माफ कर दिया जाए कमल ?'

विभास कमल फिर भूल गया कि सेन्टर टेबिल का टॉप कॉच का है। उसने फिर जोर से घूँसा मारते हुए कहा, 'तुम्हारा इरादा क्या है बताओ तो ? तुम कहना क्या चाहती हो ?'

'क्या नई बात बताना चाहूँगी ?' रीता बोली, 'किसी को दबाकर भाग जाने को मैं खून करना ही कहती हूँ।'

'बहुत खूब ! उतरकर अगर मानवता दिखाने लगता न तो तुम क्या समझती हो, मौका पाता ? तुम्हारे बाप के मोहल्ले के लौडे. .'

'हर मोहल्ले के लड़के समान ही होते हैं।'

'कभी नहीं, अगर हाथ लग जाते तो मारते-मारते चमड़ी उधेड़ लेता।'

रीता हँसने लगी। बोली, 'ओह गनीमत है कि हाथ नहीं लगे। इसी बहादुरी दिखाने के डर से माँ ने बन्दूक के नाम पर दर्जनों झूठ बोला। कभी भी बाबूजी के पास किसी चीज की चाभी नहीं रहती है।'

'ओ. !' विभास कमल बोला, 'तो यूँ कहो, कल सबने मिलकर एक नाटक में अभिनय किया था ?'

'उपाय ही क्या था ? दामाद फाँसी के फंदे से झूले, लड़की विधवा हो जाए, यह क्या कोई चाहता है ?'

विभास इस पर कुछ कहने वाला था कि मोऊ बाल झटकती दौड़ी आई, 'पापा जानते हो, अजीतदा ने कहा है, कल के उन डाकुओं को जान से मार डालेंगे। काट कर टुकड़ें-टुकड़ें कर खा जाएगा।'

रीता बोली, 'डाकू की बात अजीत ने जानी कैसे ? तुमने क्या आते ही वह किस्सा शुरू कर दिया है ?'

मोऊ ने जोर देते हुए कहा, 'मै तो बताने जा रही थी लेकिन अजीतदा बोला, 'जानता हूँ, जानता हूँ, तेरे ननिहाल के ऊपरी मंजिल पर रहने वाले साहब के कुक ने फोन करके मुझे सब कुछ बता दिया है।'

'वहा खूब', रीता बोली, 'समझ गई, टुम्पा लोगों का सर्वेन्ट नवीन अजीत के गाँव का आदमी है न।'

फिर मुडकर पति की तरफ देखते हुए बोली, 'अतएव अजीत से तुम्हारी दुर्दशा का किस्सा कुछ छिपा न रहा। मतलब इस मोहल्ले के किसी से भी छिपा नहीं रहा।'

विभास कमल फिर बैठ गया, 'लगता है, इस बात को खूब एन्ज्वॉय कर रही हो।'

गम्भीर होकर रीता बोली एन्ज्वाय कर रही हू, यह बात तुम हो तभी कह सके। मैंने तो केवल तुम्हें समझाना चाहा था कि कलंक में प्रचार की कितनी क्षमता है। खैर, जब दफ्तर नहीं जा रहे हो तब विश्राम करो, मैं जाकर देखूँ अजीत कल से क्या-क्या कुकर्म किए बैठा है। मुझे यह सोचकर दुःख हो रहा है कि अजीत तुम्हे व्यंग्यभरी दृष्टि से देखेगा।'

'अजीत ?' झटके से विभास कमल उठ खड़ा हुआ, 'अच्छा, मैं उसे अभी निकालता हूँ....'

कठिन स्वरों में रीता बोली, 'रहने दो, अब नाक कटवाने की जरूरत नहीं है।'

पति से कहती है लेकिन खुद नाक कटवाती है।

अच्छा, तू रोज-रोज क्यों अस्पताल जैसे निकृष्ट जगह पर एक मिस्त्री की लडकी के बिस्तर के किनारे बैठी रहती है ? इसकी जरूरत क्या है ? परन्तु रीता यही करती है, रोज जाती है और शशि मिस्त्री के साथ जाकर बैठी रहती है। हालॉकि वहॉ ज्यादा दिन रहना नही पड़ेगा, रीता की कोशिश से पी॰ जी॰ मे प्रबन्ध हो गया है, कुछ ही दिनों में वहॉ चली जाएगी फिर होगी सरकारी चिकित्सा।

हालॉकि रजीत मित्रा भी लड़की के इस 'रखरेबाजी' से नाराज हैं। कह रहे है, 'रुपया-पैसा तो काफी दे दिया गया है, अब और क्यों ?'

बात तो सही है।

वरना पुलिस के जिरह करने पर शशि मिस्त्री क्यों कहता कि उसकी लडकी बेहद चंचल है, हर वक्त रास्ते पर ही खेला करती है। न जाने कितनी बार शशि ही उसे मोटर, साइकिल, रिक्शे के सामने से खींच लाया है, वरना जरूर दब जाती। कसूर घोष साहब की नहीं है, कसूर है शशि के भाग्य का।

इस स्वीकारोक्ति के बाद कहीं कर्तव्य का फीता लम्बा करना उचित है ?

लेकिन रीता को तो गले से पॉव तक चादर से ढका शरीर बार-बार आकर्षित करता।

ज्यों ही कमरे में पॉव रखता वह चेहरा खुशी और कृतज्ञता से विह्वल हो उठता। रीता दोनों हाथ भर कर चीजें ले जाती, उन्हें पास रखे स्टूल पर रखकर पूछती, 'और...आज कैसी हो ?'

न जाने क्यो लाबू रीता को मेम मौसी कहकर पुकारती। शुरू-शुरू मे बात करने का साहस नही होता था, धीरे-धीरे साहस हो गया है।

पूछती, 'अच्छा मेम मौसी, आप रोज आती है, आपको कोई डॉटता नहीं है ?'

रीता बड़े आश्चर्य से सोचती, लड़की ने यह बात कैसे जान ली ? परन्तु अपने आश्चर्य को दूसरे ढंग से जाहिर करती। कहती, 'अरे वाह, मैं इतनी बडी लडकी हूँ, मुझे कौन डॉटेगा ? और फिर कोई डॉटेगा क्यों ?'

लाबू कहती, 'हम लोग इतने गरीब हैं, तुम लोग कितनी अमीर हो।'

ये लड़की कभी तो रीता को सम्मानपूर्वक कहती 'आप' फिर कभी प्यार से विगलित होकर 'तुम' पुकारती।

रीता कहती, 'अमीरो को क्या गरीबों को देखना भी नही चाहिए ?'

लाबू लज्जित होती, 'जाओ, मै क्या यह कह रही हूँ ? पिताजी बताते हैं कि तुम्हारे में खूब दया है।'

गम्भीरभाव से रीता बोली, 'दया नहीं खाक। मेरे ही आदमी ने तो तेरे पॉव पर गाडी चला दी है। मुझे शर्म नहीं लगती है ?'

लाबू बच्ची है, फिर भी बड़े-बूढ़ों की तरह बाते करती है। हो सकता है हमेशा से जैसा सुनती आई है, वैसा ही रटा-रटाया-सा बोली, 'मेरे भाग्य मे ही लिखा था, इसमें उनका क्या कसूर ?'

लाबू को यही पता है कि उसके दोनों पाँव खूब जख्मी हो गए है। उसे मालूम नही है कि उसने दोनों ही पॉव खो दिए हैं।

परन्तु जिस बाबू नामक अबोध, नहीं, सरल बच्ची सच्चाई का सामना करेगी ? उस दिन क्या वह इतनी आसानी से क्षमा कर सकेगी अपनी मेम मौसी और उसके दूल्हा को ?

मेम मौसी के साथ जब लाबू गपशप करती है तब पॉव सदा-सदा के लिए गॅवाने की आशका उल्लेख नहीं रहता है। वह बड़े आराम से पूछती है, 'अच्छा मेम मौसी, दशहरे तक मेरे पॉव ठीक हो जाएँगे न ?'

रीता दूसरी तरफ गर्दन घुमाकर कहती, 'यह मैं कैसे बता दूँ, मैं क्या भगवान हूँ ?'

'वाह, तुम तो बहुत विद्वान् हो, सब जानती हो। माँ ने कहा था, 'दशहरे के समय मुझे सफेद मोजा और घुन्टीवाला जूता खरीद देगी।'

रीता घबड़ाकर खड़ी हो जाती, 'आज मैं चलती हूँ लाबू।'

पॉव खोकर लाबू के भाग्य ने पलटा खाया है यह तो मानना ही पड़ेगा। उसके पास मेम मौसी के अलावा एक सज्जन और आते हैं। वही सज्जन जिन्होंने रास्ते से उठाकर लाबू को यहाँ पहुँचाया था।

उन्होंने शशि और उसकी पत्नी को विशेष रूप से समझा दिया है कि लड़की के आगे रो-पीटकर उसके दुर्भाग्य की वार्ता तुरन्त न पहुँचाए। लेकिन जिस दिन से उन्होने जाना है कि शशि ने पुलिस को बयान देते हुए बताया है कि कसूर और किसी का नहीं उसके भाग्य का है, दोष उसकी लडकी है, तब से उन सज्जन को शशि से घृणा हो गई है। उस दिन से उन्होंने शशि से बोलना छोड दिया है।

लाबू से मिलकर चले जाते हैं।

उम्र अधिक नहीं है, परन्तु दबंग हैं, सहज ही में कोई बात नहीं कर पाता है।

लाबू भी नहीं है, जब वह कुछ पूछते हैं, धीरे से जवाब दे देती है। वे टॉफी-लेमनजूस इत्यादि जो भी ले आते हैं, कृतार्थभव से मुस्कुरा कर ले लेती है।

परन्तु आज उसने खुद बात की।

बोलो, 'जानते है ? अब मैं इस सड़े-गले गन्दे अस्पताल में नहीं रहूँगी, चली जाऊँगी। बहुत बढ़िया अस्पताल मे जाकर रहूँगी।'

वे सज्जन स्टूल पर बैठी रीता पर एक नजर डालकर उत्साह दर्शाते हुए बोले, 'अच्छा, ऐसी बाती है ?'

उन्होंने शशि की बातों से रीता के बारे मे सुन रखा था। महिला अपने पति के पाप का प्रायश्चित्त करने के लिए हर दिन आकर इस परिवेश में बैठी रहती है, यह वह जानते हैं। अनुमान लगाया है कि अलिखित रूप से और भी बहुत कुछ कर रही है वरना शशि दम्पती उसके प्रति इतने कृतज्ञ क्यों होते ? फिर भी उन्होंने कभी भी महिला से बातचीत करने का प्रयास नहीं किया था।

जरूरत क्या है।

बड़े आदमी की बीवी है, कब किस मूड में हो।

ये प्रायश्चित्त करने की धूम, अनुताप-सा फल है या डर, कौन जाने। शायद पति के लिए अभी भी आशंका बनी है। शायद डर, जिन लोगों ने इनके पति की मोटर साइकिल को ईंटें मार-मारकर तोड़ डाला था, वे ही कहीं ईंटों का अन्यत्र न सद्व्यवहार कर बैठें। मिस्त्री क्लास लोगों का जन बल तो रहता ही है।

कुछ भी हो, ये सज्जन रीता के मामले मे जरा भी उत्साही न थे।

केवल आज जब सुना कि लाबू को दूसरी जगह ले जाया जाएगा तब एक बार मुडकर देखा। समझ गए इसकी नायिका यही हैं। जब शशि ने स्वय स्वीकार किया है कि कसूर मोटर साइकिल चालाक का नही है तब इन्हे डरने की तो कोई जरूरत नहीं है। लगता है महिला स्वयं की दयालु प्रकृति की हे।

उनके उत्साहजनक प्रश्न पर लाबू का मुँह और खुला। बोली, 'हॉ, मेम मौसी ने बताया है वहॉ सुन्दर खाट, बिस्तर, सुन्दर कमरा मिलेगा। मैं अकेली ही उस कमरे मे रहूँगी।'

'अरे बाप रे, इससे तुम्हें डर नहीं लगेगा ?'

'वाह, डर कैसा ? तब तो मॉ आकर मेरे पास रह सकेंगी।' उत्साह से लाबू की ऑखे चमचमा उठीं।

वे बोले, 'सब तो समझा पर 'मेम मौसी' का मतलब नहीं समझा ? तुम्हारे स्कूल की मौसी जी है क्या ?'

लाबू अवाक् होकर बोली, 'ओ मॉ, स्कूल में मौसी कहॉ होती है ? उन्हे तो बहन जी कहते है। मै तो मुश्किल से महीने दो महीने स्कूल गई हूँ, मुझे कोई पहचानता ही नही है। मेम मौसी तो ये हैं, आपके सामने।'

अब और उपेक्षा करना उचित नहीं, सोचकर उन्होने दोनो हाथ जोडते हुए नमस्कार करने की मुद्रा बनाई और हॅसते हुए कहा, 'माफ कीजिएगा, आपके इस विराट परिचय को मैं अभी तक जानता नहीं था। यह देखता हूँ कि आप रोज आती हैं। किस जरिए से यह परिचय अर्जित की है ?'

रीता इन्हें रोज देखती है, इनकी महानुभावता अथवा नागरिक कार्त्तव्य बोध को, जो कुछ भी हो, हृदयंगम करके इनके प्रति मन में श्रद्धाभाव रखती है फिर भी उसने अगुवा होकर बातचीत शुरू नही की थी। आज बात करने का मौका पाकर खुश हुई।

बोली, 'क्या पता मुझमें इसने क्या देखा है इसीलिए ऐसा अद्भुत नामकरण किया है।'

वे सज्जन हॅसकर बोले, 'शायद इसके मनोजगत में सर्वोच्च आदर्श मूर्ति है 'मेम'। खैर, इसे क्या पी॰ जी॰ ले जा रही हैं ?'

रीता बोली, 'कोशिश तो बहुत की पर कुछ हुआ नहीं। एक प्राइवेट नर्सिंग होम मे इन्तजाम किया है। नया ही खुला है, लगता है अच्छी केयर करेंगे।'

'आप बेचारी के लिए बहुत कर रही हैं।'

रीता ने ऑख उठाकर देखा फिर धीरे से बोली, 'कुछ भी नहीं कर रही हूँ, केवल सामान्यतम प्रायश्चित्त करने की चेष्टा कर रही हूँ। आप अगर वहॉ उपस्थिति न रहते तो ये लड़की रास्ते पर ही दम तोड़ देती।'

उन्होंने अग्रेजी मे धीरे से कहा, 'हालॉकि इसके अलावा तो कुछ हुआ नही। बचाई तो जा न सकी।'

रीता ने व्यंग्य भरी एक अजीब-सी हँसी हॅसते हुए कहा, 'यद्यपि एक आदमी बच गया।'

उन्होंने तीक्ष्ण दृष्टि से देखकर कहा, 'जी हाँ।'

सहसा रीता व्यग्रतापूर्वक बोली, 'अच्छा, आप जानते हैं कि ऐसे अपराध ी को क्या सजा मिलती है ? जेल या फॉसी ?'

वे सज्जन इस व्यग्रता के पीछे दुश्चिन्ता की छाप न देखकर चकित हुए। फिर भी शान्तभाव से बोले, 'मुझे ठीक-ठीक पता नहीं, कानून के सूक्ष्म जाल में न जाने कहॉ छेद रहता है कि उसमें से बुद्धिमान लोग बाहर निकल जाते हैं। फिर भी ऐसी घटनाओं पर कम-से-कम मैंने किसी को फाँसी पर चढ़ते नहीं देखा है।'

'जेल ?'

'यह शायद होता हो।'

'आप ठीक से नहीं जानते हैं ?'

'देखिए, इस दुनिया की बहुत-सी चीजें हम ठीक से नहीं जानते है। जब तक यह बात हम पर नहीं आ जाती है तब तक ठीक से पता भी नही लगता है। लेकिन आप क्यों जानता चाहती है ? अब तो वैसा कोई प्रश्न है ही नही। मुकदमा तो चला नहीं। सब तो ठीक-ठाक हो गया है।'

सहसा रीता तीक्ष्ण स्वरो मे बोल उठी, 'इसी बात का तो अफसोस हे। रुपये के ब्रश से सारी स्याही पोछ डाली तो 'अपराध' शब्द अर्थहीन हो जाता है।'

उन सज्जन ने रीता के उत्तेजित चेहरे पर गहरी दृष्टि डाली फिर बोले, 'लेकिन पोंछने की कोशिश तो आपने ही की है...ब्रश तो आप के ही हाथ मे था ।'

'नहीं।' रीता उदास होकर बोली, 'वह मेरे पिताजी का काम था। मैंने सिर्फ इसके परिवार को...क्यो रे लाबू क्या बात है ?'

इस सवाल पर लाबू लगभग रो पड़ी। बोली, 'तुम लोग अंग्रेजी मे क्या बोल रही हो ? और फुसफुसा क्यों रही हो ? किसे फाँसी होगी ? जेल होगी ?'

'अरे बाप रे।' रीता आसानी से हँस सकी, 'इससे तू क्यों डरती है ? तुझे जेल या मुझे फाँसी होगी क्या ? वह दूसरों के बारे में बातें हो रही हैं। अखबार की बातें।'

'अच्छे बाबू को तुम जानती हो ?'

'जानती तो हूँ ही। रोज ही तो मिलती हूँ।'।

'अरे बाबा, अंग्रजी अखबार की बातें समझाने बैठूँगी तो बहुत देर हो जाएगी। आज मैं चलती हूँ, 'अच्छा ?' कहकर उसके माथे पर हाथ फेरने के इरादे से हाथ रखते ही चौंक उठी, 'यह क्या तेरा बदन गरम है ?'

'अरे।' वह सज्जन भी चिन्तित हुए, 'तब तो नर्स को बताना चाहिए...'

'नर्स ?' रीता क्षोभ भरी आवाज मे बोली, 'देखिए अगर मिल जाए। इसीलिए यहाँ से अन्यत्र ले जाना चाहती हूँ। परन्तु मिलना ही तो मुश्किल है ..हर जगह भीड़।...हर जगह भीड़।...लेकिन हम लोग तब से बातें कर हैं पर परिचय तो हुआ ही नहीं।

सज्जन बोले, 'मै आपका नाम जानता हूँ. ..मिसेस घोष। मैं हूँ निखिल सेन।'

इसके बाल ढूँढ-ढाँढकर एक थर्मामीटर लिये नर्स पकडकर ले आए निखिल सेन। बुखार नापा गया, कुछ कम नहीं था।

'एकाएक बुखार क्यो आया ?' रीता का चिन्तातुर प्रश्न सुन नर्स खीजकर बोली, 'यह बात आप अपने डॉक्टर से पूछिए न जाकर।'

उसके बाद रुकी नही, खटपट करती चली गई।

समय खत्म हो गया। रीता लोगो को जाना पड़ गया। व्यर्थ ही में फोन करके असफल हुए दोनो डॉक्टर से बात न हो सकी। बाहर आकर भी निखिल सेन के साथ लाबू के बारे मे ही बातें होती रहीं।

अद्भुत इन्टेलिजेन्ट। अच्छे घर में जनमी होती और लिखने-पढ़ने का मौका मिला होता तो कितनी उन्नति कर सकती थी। यही सब बाते।

'अब और उन्नति।' रीता गहरे दुःख से बोली, 'इसकी तो जिन्दगी ही बरबाद हो गई।'

कभी-कभी शाम को मोऊ को दीपक मैन्सन में छोडकर रीता लाबू को देखने जाती है। वापस जाते समय माँ के पास चाय पीकर लड़की लेकर चली जाती है।

आज ऐसा ही किया था। चाय की मेज के सामने बैठते हुए सुलेखा बोलीं, 'उस दिन के बाद से तो दामाद ने यहाँ आना ही छोड़ दिया है, ओर तूने ही क्या सोचा है ? रोज-रोज उस गन्दे अस्पताल में जाकर बैठे रहना। अपनी बेटी तक की देखभाल नहीं कर रही है। बहुत तो कर दिया गया है, चार-पॉच हजार रुपये भी तो उनके पैरों पर चढ़ा दिया है, अब और क्या प्रायश्चित्त चाहिए ?'

रीता ने मॉ की ओर गम्भीर दृष्टि डालते हुए कहा, 'और हजारों रुपये डालने पर भी उनकी लड़की का पॉव वापस नहीं आएगा माँ।'

बेटी की इस भावुकता पर सुलेखा खीज उठीं। एक मिस्त्री की लड़की ही तो है ? विभास ने कुछ जान-बूझकर तो दबाया नहीं था। एक्सीडेन्ट तो एक्सीडेन्ट है। मेरी बेटी इसी बात का बतंगड़ कर रही है।

अपनी खीच को न छुपाते हुए वह बोली, 'भाग्य ही सब कुछ करवाता है रीता। खेलते-खेलते भी उस लड़की का पाँव टूट सकता था। इतना नखरा करने से काम नही चलने का।'

नीता भी बोली, 'सच दीदी, लगता है तूने घर-गृहस्थी त्याग दी है। तेरा अजीतकुमार उस दिन बता रहा था, तूने डॉटना तक छोड़ दिया है। खूब ही डेन्जरस बात है। खैर शशि की लड़की को अस्पताल से छुट्टी कब मिलेगी ?'

'छुट्टी ?'

रीता बोली, 'अभी छोड़ने का सवाल कहॉ उठता है ? अब तो उसे 'गोल्डन नर्सिग होम' में ले जायां जा रहा है, इसके बाद ऑपरेशन करके देखा जाएगा कि क्या किया जा सकता है।'

सुलेखा आश्चर्यचकित होकर बोली, 'इसके मतलब अब ओर राजसी खर्च का झटका। यह सब क्या तुझे करना पड़ेगा ?'

रीता हँस पडी, 'और नहीं तो क्या शशि मिस्त्री करेगा ?'

सुलेखा का जी जल उठा। लड़की की यह ज्यादती उन्हें असह्य लगी। नाराज होकर बोलीं, 'लड़की के लिए उसे कुछ कम रुपये तो मिले नहीं है।'

'लड़की के लिए नहीं मिले हैं मॉ, रीता बोली।

'लड़की के बदले में पाया है। गरीबी का इतना ही लाभ है। न मिलता तो क्या शशि कहने आता कि दोष उसकी लडकी का है और उसके भाग्य का ?'

'पता नहीं बेटा, तुम्हीं जानती हो। पर मैं यह जरूर कहूँगी कि तू तिल का ताड़ कर रही है। तेरे बाबूजी भी यही कह रहे थे।'

'बाबूजी ?'

रीता जरा रुकी फिर बोली, 'उसी दामाद के ससुर हैं न ? अच्छा चलती हूँ, मोऊ कहाँ गई ?'

अब सुलेखा लड़की को रोकने का प्रयास करने लगी; खाना खाकर जाने के लिए कहा। पिता के लौटने पर उनकी मोटर पर जाने के लिए भी कहा। बोली, 'आज बढ़िया खाना बना है, दामाद के लिए भी दे देगी, परन्तु रीता मानी नहीं।'

बोली, 'आज मन खराब हो रहा है, रहने दो मॉ।'

नीता बोल उठी, 'मन की बीमारी का नया क्या कारण पैदा हो गया ?'

'अरे आज देखा लड़की को एकाएक काफी बुखार चढ़ गया है। बुखार होना ठीक नहीं। फिर डॉक्टर भी आसानी से पकड़ मे आते नहीं हैं। इस गोल्डन नर्सिंग होम में आ जाए तो निश्चिन्त हो जाऊँ। प्राइवेट है, हर वक्त पर डॉक्टर मिली नहीं। चाय पीकर चली गई।

सुलेखा सास छोडते हुए बोली, 'यह शशि की लडकी मेरी बेटी के लिए शनि मे आ जाए तो निश्चिन्त हो जाऊँ। प्राइवेट है, हर वक्त पर डॉक्टर मिला नही। चाय पीकर चली गई।

सुलेखा सांस छोड़ते हुए बोली, 'यह शशि की लडकी मेरी बेटी के लिए शनि है। इसी के कारण मेरे दामाद तक से मनोमालिन्य हो गया है इसका। इतने सुख से थे, खुश थे।

नीता हँसकर बोली, 'खुश रह सकती है पर क्या सुखी थी माँ ?'

'क्यों नहीं होगी भला ?' सुलेखा बिगड़कर बोली।

नीता धीरे से हँसकर बोली, 'जिस वजह से तुम नहीं हो।'

'मैं...मैं सुखी नहीं हूं ?'

नीता बोली, 'हो क्या ? तब तो अच्छा ही है। मेरी एक गलत धारणा टूट गई।'

सुन्दर खाट, सुन्दर बिस्तर, सुन्दर घर...यह अभागे शशि मिस्त्री की लडकी के भाग्य में लिखा न था। गन्दे परिवेश से ही उसे विदा लेना पडा। अस्पताल ने ही उसे छोड़ दिया।

आज केवल गले तक नहीं, मुँह तक चादर ढकी हुई थी। उस ओर निर्निमेष दृष्टि से देखते हुए रीता बोली, 'मनुष्य कितना अक्षम है देख रहे हैं न निखिलबाबू।'

निखिल सेन स्तब्ध हो गए थे। बोले, 'यह तो हर घडी इन्सान देख रहा है।'

'फिर भी अहंकार की सीमा नहीं।'

रीता बोली, 'मैंने अहकारवश ही सोचा था कि लडके का जीवन-भर ..'

न, लडकी वास्तव मे बड़ी समझदार थी। रीता पर आजीवनकाल बोझ बने रहने के लिए अपना अधकटा शरीर लेकर पड़ी नही रही।...फिर मरी भी ऐसा समय देखकर कि अब विभास कमल नामक आदमी को खून करने के जुर्म मे कोर्ट के कटघरे मे खड़ा तब नहीं किया जा सकेगा। उसका भाग्य ही अनुकूल है। एक्सीडेन्ट के चार हफ्ते बाद अगर कोई बुखार होने के कारण मर जाए तो किसे दोष दिया जाए ? जबरदस्त इन्फ्लुएन्जा क्या मृत्यु का कारण नही हो सकता है ? फिर बिलावजह इन्फ्लुएन्जा भी तो हो ही सकता है।

बाहर शशि की पत्नी रो-रोकर समस्त परिवेश को भारी कर रही थी। भाग्य को, भगवान को, और हाथ से फिसलकर निकल गई लडकी को पुकार-पुकार कर पूछ रही थी, 'गई अगर तो उसी दिन तभी क्यो नहीं चली गई ? आसा देकर निराशा क्यों किया ? झूठी दिलासा क्यों दी ?'

रीता, भी यही सोच रही थी। पास खड़े अल्पकालीन परिचित व्यक्ति के आगे अपने दिल की बात कहते हुए बोली, 'क्या आप बता सकते है, क्यो ? केवल क्या बड़े आदमी की असुविधा का ध्यान रखकर ?'

'असुविधा ?' निखिल सेन देखते रह गए।

रीता बोली, 'असुविधा नहीं तो और क्या ? अब क्या इस आदमी को खून करने के अपराध में कोर्ट तक घसीटा जा सकेगा ?'

अल्परिचित निखिल सेन गम्भीरभाव से बोले, 'कोर्ट में तो आपको ले जाकर खड़ा करना चहिए। आप अपने पति को...'

'जानती हूँ।' रीता थके-थके स्वरों मे बोली, 'जानती हूँ मिस्टर सेन। फिर भी लग रहा है भाग्यवानों के अपराध की कोई सजा नहीं होती है...क्या हमेशा पृथ्वी पर यही नियम चलेगा ?'

इस परिस्थिति पर भी निखिल सेन मुस्कुराए। बोले, 'अब जब भगवान भी इन्हीं लोगों के दल मे है तो उपाय ही क्यों है ?'

सच, उपाय ही क्या है ?

ईश्वर जब अपनी क्षमता का अंश किसी को देते है तब शायद उन्हें अपना व्यक्ति समझने लगते है। अतएव उनके साथ अपना-सा व्यवहार भी करते है।

फिर भी—

फिर भी रीता नामक मूर्ख लड़की विभास कमल घाष के घर लौटकर नही गई। नौकरी ढूँढने लगी और माँ के पास आकर अक्सर कहा करती, 'माँ मुझसे खून की कमाई खाई न जाएगी। जितने दिन तक नौकरी नही मिलती है, जरा रहने-खाने दो।'

'और तेरी लडकी ?'

'लडकी ? गरीबों की तरह रखना चाहे तो माँ के साथ रहे और अमीरो की तरह रहना चाहे तो बाप के साथ रहे।'

'यही तेरी बुद्धिहीन बेटी की बुद्धिहीनता है माँ।'

'एक मिस्त्री की लड़की के कारण तू अपना जीवन बरबाद कर डालेगी ?'

'परन्तु जीवन में क्या सचमुच कुछ था माँ ?'

सुलेखा उदास होकर बोली, 'मै क्या कहूँ बेटी, तू ही बता। मैंने क्या अपने बारे मे सोचा है ?'

'शायद मै भी न सोचने बैठती माँ, अगर ऐसा बडा धक्का न लगा होता। लेकिन सोचती हूँ उसे जेल से बचाकर नुकसान ही किया है हमने। कुछ दिन तक जेल हो आता तो मैं सहानुभुति की नजर से देखती उसे। अब तो वह बात भी नही है।'

'तू जरा विभास की बात भी सोचने की कोशिश कर रीता। जान-बूझकर तो उसने ऐसा किया नहीं था।'

'मैंने बहुत सोचा है माँ। सोचते-सोचते पागल हुई जा रही हूँ। इस समय इसके अलावा और कुछ सोचते नही बन रहा है। सुलेखा धीरे-धीरे बोली, 'अभी ऐसा लग रहा है, बाद में सब धीरे-धीरे ठीक हो जाता। तू फिर पहले की तरह हँसेगी-बोलेगी, घूमे-फिरेगी।'

रीता भी धीरे से बोली, 'शायद तुम्हारा कहना ठीक है माँ। लेकिन यह स्वरूप पहले मेरे लिए अनजाना था, अब जान लेने के बाद उस जीवन को छूने तक ही इच्छा नहीं हो रही है।'

सुलेखा लम्बी सास छोडते हुए वोली, 'लोगो को मुँह दिखाने लायक भी तो रहना चाहिए बेटी।'

सुलेखा लम्बी सास छोड़ते हुए बोली, 'लोगों को मुँह अपने देखने लायक न रहा उसकी दूसरों की नजर में क्या कीमत रही माँ'

सुलेखा बिगड़ी, 'अगर तेरा यह हाल है तो अपने बाप को कैसे बरदाश्त कर रही है ? ससुर और दामाद दोनों ही तो एक हैं।'

रीता माँ की तरफ देखकर बोली, 'माँ तुम गलत कह रही हो। एक जैसे नहीं हैं। पिताजी मे और कुछ-भी हो, वे का पुरुष नहीं है और शायद तभी तुम उनसे साथ रह रही हो। मेरे साथ तो वह बात भी नही।'

□□

वे टूटते नहीं

गरीब को स्वाभिमान करने का भी हक नहीं है, बेचारे पवन को गरीबी और अभाव ने कहीं का नहीं रखा। वह भी ओर गरीबों की तरह रहकर जी सकता था, लेकिन वह इसलिए सभव नही हुआ कि वह गरीब होकर भी स्वाभिमानी था। कहाँ तो वह लेखक और चित्रकार (कार्टूनिस्ट) बनना चाहता था, लेकिन भाग्य ने उसे एक दिन भी स्कूल का मुँह नहीं दिखाया।

लेकिन वह टूटा नहीं। दुनिया ने उसे हर प्रकार से टूटने व कलकित होने को विवश किया, पर वह अपने स्वाभिमान के लिए सतत संघर्ष करता रहा ओर अन्ततः सदा से घृणा करने वाले घुघरुओं को पॉव मे बॉधकर वह मसालेदार लाई-चना बेचने निकल पड़ा।

क्या यही उसकी नियति थी...

भोर हो रही थी, पवन एक बहुत ही सुन्दर देख रहा था। पवन बाबू लोगो के लड़कों के झुण्ड के साथ हाई स्कूल का मैदान पार कर स्कूल के गेट से अन्दर चला जा रहा है। हाथ में किताब लिऐ है। क्या सवाल है, उसका क्या उत्तर, यह सपने में भले न देखे, पर पवन उस समय का गौरवोज्ज्वल दृश्य देख रहा था। एकाएक मुस्कुराते हुए पवन को लगा क्लास के बाहर कही कोई आवाज हुई।

धम्-धूम-धूम-धूम।

कैसी आवाज है यह ?

कही छत पीटी जा रही है क्या ? या कि चौकीदार इमामदस्ते में मसाला कूट रहा है ? कितना बुरा लग रहा है। पढ़ाई के वक्त ऐसी आवाज ? उत्तेजित पवन यह बात दूसरे लड़कों से कहने चला, पर किसी का भी चेहरा स्पष्ट दिखाई नही दिया। सब कुछ मानो धुंधला रहा हो। पवन और उत्तेजित हुआ। मास्टर साहब से कहने आया, 'पढ़ते वक्त आवाज क्यों ? आप मना करिए न ?'

पर ताज्जुब ! मास्टर साहब भी धुंधला साया के रूप में न जाने कहां अदृश्य हो गए। और यह आवाज बढ़ती ही जा रही थी, ओर तेज...ओर तेज। तब पवन खुद ही चिल्ला पडा 'यह आवाज कैसी ?'

और तभी नीद खुल गई। पता चल गया 'आवाज कैसी है ?'

जीवन-भर हर रोज, दिन पर दिन जिस आवाज को पवन सुबह सुनता है।

धम्-धम्-धम्-धम्।

हॉ इमामदस्ते की ही आवाज है। स्कूल का चौकीदार नही, आवाज कर रहा था पवन का पिता रजनी सामन्त। न केवल पवन की निद्रा पर बल्कि मोहल्ले-भर की सुवह की निद्रा पर इमामदस्ता को चोट पहुँचाता है रजनी अपनी छुट्टियॉरहित जीविकार्जन हेतु।

रजनी के व्यवसाय में छुट्टी नाम की कोई चीज नहीं है क्योकि रेलगाडी नामक अभागी वस्तु के जीवन में भी छुट्टी नहीं है। इसीलिए रजनी को हर रोज भागकर रेल पकड़नी पड़ती है।

लेकिन क्यों ? क्या पवन सामन्त के बाप रजनी सामन्त के हाथो मे सरकार ने ऐसा कोई यन्त्र दे रखा है जिसे हिलाए बगैर रेल टस से मस न होगी ?

ऐसा होता भी तो है।

इस दुनिया में तुच्छ-से-तुच्छ व्यक्ति के हाथों में ऐसे महत्वपूर्ण ओर उच्चकोटि के काम का जिम्मा रहता है कि देखकर ताज्जुब हो जाए। खासतौर से मिलो, कारखानों में। एक-से-एक दिग्गज व्यक्तियों के आस-पास या पाँव-तले एक-आध दीन-दुखियारे छोड़ दिए जाते हैं जिनका दायित्व इन दिग्गजो से किसी तरह भी कम नहीं होता है। इन अक्षरज्ञानहीन व्यक्तियों को जरा-सी चूक या असतर्कता अथवा आलस से दुनिया उलट-पुलट सकती है।

पर ऐसा होता नहीं है।

कम-से-कम आसानी से ऐसा देखने सुनने में आता नहीं है। इंजीनियर गण भले ही गलती कर बैठे, मिस्त्रियों से गलती नहीं होती है।

रेलगाड़ी के विशाल कल-कारखाने में ऐसे मूर्ख जिम्मेदार व्यक्ति बहुत मिलेंगे।

परन्तु पवन के पिता रजनी सामन्त उन मूर्खो क दल मे नही है उसके हाथो मे रेल का कोई यन्त्र नहीं है।

रजनी और भी तुच्छ है। नगण्य है।

रजनी रेल के हर डिब्बे मे घूम-घूमकर मसालेदार लाई बेचता है।

हॉं, मसालेदार लाई इससे ज्यादा तुच्छ चीज क्या होगी ? रजनी अगर रेल मे छुरी-कैंची, ताला-चाभी, चाभी के रिंग, कंघी ओर शीशे बेचता तब शायद पवन भी मुंह दिखाने लायक रहता।

अथवा हाथ कटने पर लगाने वाला मलहम, वैनिशिंग स्याही, वज्रचूर्ण दन्तमंजन, या व्रत-पूजन की किताबे, सस्ती हास्य की कम दाम की किताबें, एक रुपये में मिलने वाली दो कलमों, उसके साथ मुफ्त की स्याही की दवात...इसी तरह की और भी कितनी चीजे है। अगर खाने वाली चीजे ले लो तो केला है, सतरा है, सेब है, रसगुल्ला, सन्देश, समोसे भी, इससे भी पवन का सिर ऊँचा नहीं होता। परन्तु रजनी सामन्त के प्रारम्भिक जीवन मे यही काम चुन लिया था।

इसके लिए रजनी के मन में कोई दुःख नहीं है, हर सुबह उठकर एक नए उत्साह से वह अपने मसालेदार लाई का डिब्बा तेयार करता है।

यह सब देखकर पवन का मन सील उठी लाई जैसा हो जाता है।

परन्तु यह 'मुँह न दिखाना' या 'सिर नीचा' होता किसलिए है ? पवन क्या ऐसे सर्किल मे घूमता या रहता है ?

बिल्कुल नही।

पवन अपने पिता रजनी सामन्त के समगोत्रियों के मध्य ही रहता है, उन्हीं के बच्चों के साथ पल रहा है और उसे बचपन से ही अपने व्यवसाय में तालीम दे रहा है।

फिर भी पवन के मन में 'सिर नीचा हो जाने' और 'मुँह न दिखा सकने' का प्रश्न उठता है कभी-कभी। औरों के सामने नहीं, पवन अपने खुद के सामने सिर नहीं उठा पाता है। लड़का जब छोटा था, छह या सात का, रजनी अपनी पत्नी से कहता था, 'शरारती लड़का न जाने कहॉं-कहाँ भागता फिरेगा, तुझे परेशान करेगा, इससे अच्छा होगा कि मैं उसे अपने साथ ले जाऊँ. .इसे एक साफ पैन्ट कमीज पहना दे।'

सुनकर पवन की माँ खुश होती। जल्दी से साफ कपड़े पहनाकर उतने बडे लड़के की ऑखो मे काजल की मोटी-सी लकीर खींच देती।

शुरू-शुरू मे पवन बड़े उत्साह से जाता था। रेलगाड़ी पर चढ़कर कितनी दूर चला जा रहा है, पर पिताजी की ऐसी महिमा है कि औरों की तरह टिकट नही लेना पड़ रहा है। उस समय पवन इसे बड़े गौरव की बात समझता था। परन्तु यह मनोभाव अधिक दिन नहीं रहा।

एकाएक ही नन्हें से पवन के मन में पिता के काम के प्रति वितृष्णा-सी हो गई। पवन को लगा, पिताजी कितने बुरे लगते है जब रंगीन छींट का भड़कीला-सा एक कुर्ता पहन, पॉव में घुँघरू बॉधकर हर कमरे में घुस जाते हैं ओर पॉव ठोक-ठोककर इस कोने से उस कोने तक आते-जाते घुँघरू के ताल के साथ सुर बॉधकर गाते हैं, 'मसालेदार ! मसालेदार लाई-चना ! चले आइए, चले आइए, बच्चे-बूढे ओर जवान ! टेस्ट करिए, एक वार, खाएँगे बारम्बार !'

यह कविता रजनी द्वारा रचित है। बीच-बीच मे एक-आध नए शब्द भी जोड़ता है।

कभी-कभी घर पर बीवी को दिखाने के लिए और मजाक करने के लिए, यही पोशाक पहन घुँघरू बॉध लेता था रजनी। या तो रसोईघर के सामने या फिर काम पर निकलने से पहले।

देखकर उसकी पत्नी छवीरानी हॅसते-हॅसते लोट-पोट होती। पर पवन को नाराज होते देख यह तमाशा करना बन्द कर दिया था रजनी ने। पवन खेलते-खेलते बोल उठता 'आः पिताजी तुम बुरे लग रहे हो।'

रेलगाड़ी पर घूमने जाना भी इसी 'बुरा लगने' की वजह से छोड दिया था पवन ने। 'मै नहीं जाऊँगा', कहकर जब वह अकड़कर खड़ा हो गया, रजनी ने बड़ी खुशामद की, लैमनचूस देने का वादा किया परन्तु वह टस से मस नहीं हुआ।

'तुम पॉव क्यों ठोकते हो ? मुझे बहुत गन्दा लगता है।'

पिता अवाक् होकर बोला, 'पैर न ठोंकूँगा तो घुँघरू में बोल कैसे बजेगे ?'

'न बजें, हर कोई क्या पॉव में ये सब बॉधते हैं ? फिर आवाज बदलकर विनती करते हुए बोला, 'पिता जी सत्यनारायण की कथा', 'लक्ष्मीव्रत कथा' की किताबें क्यों नहीं बेचते हो ?'

पिता हँसकर सुर में कहता, 'लक्ष्मीव्रत कथा', 'गोपाल भाँड की कहानियाँ', 'नारी व्रत कथा' कोई रोज-रोज थोड़े ही खरीदता है पगले... ? जीवन में एक बार बस। तेरे बाप का माल ? शाम तक साफ। एक ही आदमी सौ बार, पाँच सौ बार खरीदेगा।'

'तो फिर तुम छुरी-कैंची, ताला-चाभी बेचा करो।'

रजनी ओर हँसता। चिल्ला-चिल्ला कर कहता, 'अरे सुन रही है अपने बेटे की बात ? कहता है छुरी-कैची, ताला-चाभी बेचा करो। यात्रा दल के लोगो की तरह मेडल लगाए से लगते हैं न वे लोग, तभी लड़के के मन को भा गए हैं। अरे बेटा पवन, रजनी सामन्त इसी मसालेदार लाई चने से जितना कमा लेता है उतना वे एक महीने में नहीं कमाते हैं।'

फिर समझाते हुए कहता, 'सुन पवन, तुझे एक बात बताऊँ। अगर मै मर जाऊँ तो मेरी बात याद रखना। अगर व्यवसाय में घाटा नहीं चाहते हो तो ऐसी चीज का व्यवसाय करो जिसकी इन्सान को रोज जरूरत रहती है। खाने की चीज ही ठीक रहती है। रोज तो क्या, हर घड़ी इसकी जरूरत है। तेरी मानदा बुआ ? पकौड़ियाँ बेचकर कैसी चमक उठी है, जानता है न ? नहीं ? तो सुन, मानदा को जब उसके आदमी ने भगा दिया और दूसरी शादी कर ली, तब तू इतना-सा लड़का था। मानदा मायके आई तो लेकिन शुरू से ही तय कर लिया था उसने। बोली, 'मैं तुम लोगों के ऊपर बोझ बनकर नहीं रहूँगी। मेरे लिए थोडी-सी जगह का इन्तजाम कर दो। मैं अपने पाँव पर खडी होवूँगी।' उसके बाद कड़ाही-कलछी, बेसन, तेल मिर्च और हींग के भरोसे जुट गई। स्टेशन के किनारे दुकान लगाकर बैंगन ओर प्याज की पकौड़िया बेचकर तेरी बुआ कहाँ जा पहुँची हैं आज। दो-दो गायें खरीदी हैं, दूध का ब्यापार भी करती है, गोबर से कंडे बनाकर बेचती है। अब कहती है धान की खेती करेगी, जमीन खरीदेगी। छुरी-कैंची बेचती तो यह सब कर पाती ?'

पवन चिढ़कर कहता, 'हट ! बुआ तो औरत है। औरते यह सब बेचती है क्या ?'

कण्ठ-स्वर में जिद्द का आभास।

अर्थात् रजनी और पवन में मतान्तर रह ही जाता।

परन्तु रजनी ने बेटे के इस विरोध को कोई खास महत्त्व दिया नहीं था सोचता था, बच्चा है, बालबुद्धि है। इस समय बच्चे ऐसा ही सोचते है। रजनी भी तो बचपन मे सोचा करता था, रेल मे गार्ड का काम करेगा पर बन गया लाई-चना वाला।

अब क्रमशः रजनी को चिन्ता होने लगी है। बड़ा तो हो गया है बेटा. ठीक-ठीक पता नही फिर भी बारह-तेरह साल का तो हुआ ही। बाप का काम का तौर-तरीका सीखना नहीं चाहता है।...मन लगा रहता है खेल-कूद में। खेल भी ऐसा वैसा नहीं...लिखने का खेल। किसी ने ऐसे खेल का नाम सुना है ?

वह भी कितनी पुरानी बात हो गई। यह लिखने वाला खेल तभी से शुरू हुआ था। एक बार रेल पर एक फेरीवाला नया माल ले आया। मैजिक स्लेट।

एक छोटी-सी स्लेट उठा-उठाकर दिखाते हुए वह आदमी कह रहा था, 'यह देखिए, इस पर लकीरें खींच रहा हूँ। अँगूठे से एक कोना दबाइए, बस—बस वैनिश।' चिड़िया, पेड़ और भी बहुत कुछ बना-बनाकर अँगूठे से दबाकर गायब कर रहा था।

उस दिन पिता के साथ पवन भी गया था। देखकर मुग्ध हो गया। व्याकुल होकर प्रार्थना की थी। एक स्लेट खरीद देने के लिए कहा था उसने।

पिता ने दाम पूछा, पूरे एक रुपये।

सुनकर चौंक उठा रजनी, हिचकिचाया। बच्चे को समझाने की कोशिश की, 'ऐसी क्या चीज है बेटा ? दाम देख कितना ज्यादा है।'

लड़के ने दूसरी तरफ मुँह फेर कर कहा था, 'तब रहने दो।'

बस।

बस इसी बात से उसने पिता को मुट्ठी में कर लिया।

जिद्द करे कोई तो समझाया जाए,

फिजूल की बात पर मचले तो थप्पड़ जड़ दे, लेकिन 'रहने दो' कहने पर ? तब तो खरीदना ही पड जाता है। लड़का भी तो बडे बूढ़ों की तरह बोलता है। कह सकता है, 'नही खरीदना ही पडेगा।' तब न लगेगा कि बच्चा बोल रहा है।

फिर भी रजनी ने सोचा था, हटाओ, खरीद ही दूँ। कभी तो कुछ माँगता नहीं है। खाने-पीने का भी कोई खास शौक नहीं, जैसे उसकी माँ को है। एक

बार कटहल खाने की जिद्द की थी उसने तो हाट छान मारा था रजनी ने। पूरे बारह आने देकर खरीद लाया था ताजा कटहल।

तरह-तरह की चिन्ता करने के बाद जब वह आदमी रेल से उनरने लगा और पवन की ऑखो से भी एक तरल वस्तु उतरने ही वाली हुई तभी जल्दी से बोल उठा, 'अरे ओ भाई, मैजिक दिखाकर लडके को जब वश मे कर ही लिया है तो एक स्लेट दे ही जाओ।'

रुपया बढ़ा दिया था निकालकर।

पवन ने मुँह फुलाकर कहा था, 'क्या मैं वश में हो गया हूँ ?'

'लो इस बात पर भी लौंडे को नाराजगी है। अरे ये तो बात की बात है। ले, पकड़। घर पहुँचकर मॉ को अचरज में डाल देना। फूल-पत्ती-चिड़िया वनाना और उड़ा देना।'

तब जाकर पवन के मुख पर प्यारी-सी हँसी दिखाई दी थी।

उसके बाद पवन ने अद्भुत एक काम किया। मैजिक स्लेट पर फूल-पत्ती-चिड़िया न बनाकर उस पर बनाया रेल के डिब्बो पर जो सब लिखा था। बनाया ही कहना पड़ेगा, पवन को उस समय पढ़ना-लिखना तो आता नहीं था।

चित्र की तरह पवन बंगला-अग्रेजी के अक्षरो को बनाता और बाप को पकड़कर पूछता, 'पिताजी यह क्या लिखा है ?'

बाप की भी शिक्षा वैसी ही थी।

बल्कि शादी से पहले छवीरानी ने तीन-चार दर्जा पढ़ा था। छवीरानी बेटे के चित्रो को देखकर मुग्ध होती। पति को बुलाकर कहती, 'देखो, देखो बिल्कुल असली अक्षरों जैसी ही लिखा है। स्कूल के सामने जाकर स्कूल का नाम लिख लाया है 'महेशतला हाई स्कूल।' उधर जोगिन की दुकान के 'साइनबोर्ड' से देखकर उतार लाया है 'उधार माल नहीं मिलेगा।'

धीरे-धीरे पवन को इस खेल का नशा-'सा हो गया। खेलने के नाम पर हाथ में स्लेट-पेंसिल लेकर निकल पड़ता औरजहाँ कहीं कुछ लिखा हुआ देखता, उसे लिख लेता। फिर उसी से पढ़ना सीख लिया। पूरा-पूरा शब्द पढ़ लगा, 'श्री

श्री हरि सभा' 'अखण्ड नाम कीर्तन', 'न्यू पैराडाईस सिनेमा', 'झनक-झनक पायल बाजे', 'तरुण संघ पाठागार', 'सोम व शुक्र को बन्द', 'जय माँ काली', 'पथ का साथी', 'फिर मिलेंगे', 'आइए', 'धन्यवाद' इत्यादि।

चित्र बनाते-बनाते लिखना सीखा पवन ने और लिखते-लिखते पढ़ना।

छवीरानी आश्चर्यचकित हो जाती ।

रजनी सामन्त लेकिन आश्चर्य नही करता। छवीरानी को धिक्कारते हुए कहता, 'विद्यावती माँ का बेटा विद्या-दिग्गज। मैं पूछता हूँ आज तक लड़के से कोई काम तो करा न सकी। काम की शिक्षा देनी पड़ती है पवन की माँ। गृहस्थ घर का लड़का है, हाथ-पाँव हिलाकर काम कर सके, पेट पाल सके, इस बात की शिक्षा उसे मिलनी चाहिए।'

छवीरानी लडके का पक्ष लेती। कहती, 'लिखना-पढ़ना सीख लेगा तो और भी अच्छा होगा। अच्छा काम कर सकेगा।'

रजनी उसकी बात उड़ा देता। कहता, 'झूठे सपने मत देख पवन की माँ। मैं पूछता हूँ, बाबू लोगों के घर के लड़को को नहीं देखती है क्या ? तीन-तीन, चार-चार पास करके घर पर बेकार बैठे है।...रेल का किराया देते हैं, कलकत्ता जाते है 'इन्टरभू' देने और वापस आकर फिर ला'बेरी में जमघट लगाते हैं। बाईस साल, पच्चीस साल उमर हो गई है मगर नौकरी...एक नहीं, कमाई...कुछ नहीं। रजनी सामन्त इतने दिनो तक खिला सकेगा अपने बेकार बेटे को ?'

बेकार बैठाकर खिलाने की बात सुनकर छवी रानी असन्तुष्ट होती। मुँह चिढ़ाकर कहती, 'औरों की तरह दो-दो दर्जन लड़के होते तो खिलाते कि नई. उन्हे। एक ही लड़का है...'

रजनीकान्त मस्त आदमी है। हा-हा करके हँसते हुए बोला, 'अब भगवान ने दिया नहीं तो उनका खाना भी रखा लेगी क्या ? भगवान जिसे देते हैं उसके खाने का इन्तजाम भी करते हैं, समझी ?....एक खाने वाला है इसीलिए सोने से मढ़ रही है। मछली की बढ़िया बोटी, दूध की मलाई, इमिरती, जलेबी, रसमलाई लड़के को खिला रही है। डेड़-दो दर्जन होते तो दे सकती ? तब खिलाती मोटा चावल ओर नाले के किनारे उगा साग।'

छविरानी ऐसे कटुसत्य के आगे मुँह कैसे खोले ? देखती तो है अपने आस-पास। रजनी के ही रिश्ते के भाई गगन सामन्त के ग्यारह बच्चे है। माँ, बीबी, खुद और दर्जन भर बच्चे। नमक-चावल या साग-चावल....और क्या मिलेगा खाने को ?

जब से लड़का बड़ा हुआ है छवीरानी का मन प्रायः हाहाकार कर उठता है। लोगो के यहाँ छोटा बच्चा देखती तो खुद को वंचित महसूस करती है। भगवान ने एक देकर हाथ रोक लिया। पवन की कथरियाँ, कपड़े, सुतई, कजरौटा वैसे के वैसे अछूते पड़े हैं, किसी ने छुआ तक नहीं।

हितैषी भला क्यों चुप रहेगे ? कहते है, 'अरे एक रुपया भी क्या रुपया है ? एक लड़का, लड़का हुआ ?'

कुछ लोग ढाँढ़स भी बँधाते, उदाहरण पेश करते...किसी के दस साल बाद फिर बच्चा हुआ, किसी के दो बच्चो के बीच बारह साल का अन्तर है।.....

इसी परिस्थित में धीरे-धीरे पवन भी बारह-तेरह साल का हो गया। न जाने कैसें सब कुछ लिखना सीख लिया है उसने, रुक-रुककर पढ़ भी लेता है। हालाँकि पवन स्कूल में भर्ती नहीं हो सका था। रजनी का दृढ़ विश्वास था कि बाबू लोगों के लड़को के साथ एक ही बेंच पर बैठेगा तो उन लोगों जैसा मिजाज हो जाएगा। इसके अलावा 'महेशतला हाई स्कूल' मामला ही सब और तरह का—रजनी सामन्त जैसा लाई-चना बेचने वाला इतने नखरे कैसे उठा सकता है ? ओर एक स्कूल है। जिले की समाज सेविकाएं गोविन्द मंदिर के नाट्य-सभा में शाम के वक्त यहाँ स्कूल चलाती हैं। न फीस, न किताब खरीदने का झंझट। किसी के पास अलग से कोई किताब नहीं रहती है। वही दीदी लोग किताब लाती हैं, उसी से पढ़ाती हैं।

लेकिन पवन उस स्कूल में पढ़ना नहीं चाहता है। जिस स्कूल में फीस नहीं ली जाती है वह भी कोई स्कूल है ? वह होंठ तिरछे करके कहता, 'हूँ, मैने अपने आप से जितना पढ लिया है उतनी पढ़ाने में बहनजी लोगों को सल-भर लग जाएँगे।'

इन्ही सब कारणो से पवन नामक लड़का आज भी कुछ नहीं करता है। रजनी दुखी होकर कहता, 'समझीं छवीरानी, पवन न घर का है न घाट का। उसे तो बाबू लोगों के घर ही पैदा होना चाहिए था।'

छवीरानी इस बात का उत्तर न देकर जल्दी से कहती, 'नाम लेकर मत पुकारो जी शर्म लगती है। कोई सुन लेगा तो हँसेगा।'

सदा प्रसन्न रहने वाला रजनी दुःख भूलकर हँसने लगता। कहता, 'अपनी बीवी को बुला रहा हूँ किसी और की बीवी को नही।'

स्वस्थ समर्थ रजनी हालाँकि किसी की परवाह नहीं करता है। रात के अन्तिम प्रहर मे काम शुरू कर देता है। सुबह-सुबह पहला काम तो यही है कि भोर को उठकर मोहल्ले भर की नींद खत्म कर देना।

रोज रात को छवीरानी बड़ा एक भगौना भरकर चना उबालती। फिर उसे टोकरी में डालकर तिरछा करके रख देती ताकि सारा पानी झर जाए। तब कहीं छवीरानी सोने जाती।

रजनी उसी उबले चने को इमामदस्ते में मुट्ठी भर-भर डालकर कूटता। पीट-पीट कर चपटाकर लकड़ी के बक्स के खानों में भरता। उस पर ऊपर से नमक, काली मिर्च और मिर्च छिड़क देता।

उसके हाथ का कमाल था कि सारे चने चपटे ही रहते, टूटते-फूटते नही। बच्चे इसे 'चना-चपटा' कहते। मसालेदार लाई का यह एक अभिन्न अंग था।

इसके बाद रजनी मसाला पीसने बैठता, सिल लोढा लेकर।

रजनी अपने स्पेशल मसालेदार लाई में बारह बार मसाले मिलाता है। जीरा भुना से लेकर अमचुर तक नाना प्रकार के स्वादों वाले मसाले मिलाता है, उसे स्पेशल बनाने के लिए।

लम्बे आकार के लकड़ी के बक्स को छोटी-छोटी लकडियो के टुकड़ो मे विभाजित कर उनमें अलग-अलग चीजें रखता। जैसे 'चना चपटा', 'उबली उरद', 'उबली मूँग', 'कतरा प्याज', 'बारीक कटा खीरा', 'नारियल कसा', 'नीबू के टुकड़े' और फिर लाई तो है ही। उस बक्स के बाहर लोहे के छल्ले लगे थे जिसमे डिब्बों में विभिन्न प्रकार के मसाले भरे होते। यह डिब्बे सप्लाई करते मोहल्ले के जगन्नाथ बाबू। बड़े व्यापारी थे। रजनी को पता था तीन-चार डिब्बे उनके यहाँ पर हर महीने मिल जाते हैं।

जब भी पुराने डिब्बे गन्दे हो जाते, नए डिब्बे माँग लाता रजनी। उसके सरसों के तेल की शीशी की विशेषता यह थी कि शीशी के डॉट में अनेकों छेद

किए हुए थे, जिससे डाट निकाले बगैर ही झड़ने पर तेल की कुछ बूँदें टपक पडेगी।

अपना सारा सामान रजनी रात ही को झाड-पोछकर साफ करके रख देता था। चाहे रात कितनी भी हो जाए, वह इस काम को टालता नहीं था।

बक्स के दोनो ओर हारमोनियम की तरह हैंडिल लगे थे। उसमे रजनी ने चेन बांध रखा था। उसी को गले में लटका लेता था। गर्दन को बचाने के लिए एक छोटा-सा कपड़ा चार तह करके चेन के नीचे कन्धे पर रख लेता था। निकलते वक्त छवीरानी उसके हाथों में पान के दो बीड़े रख देती और हर रोज कहती, 'ओह क्या जल्दी है ? राजा-महाराजाओं के दरबार में जाने के लिए भी इतनी जल्दी नहीं करता है कोई। चले एक महाराजा लाई चना बेचने।'

'हूँ। तभी तो महारानी पान के बीडे ले आई हैं।' कहकर रजनी चलते-चलते हँसता।

इस समय घुँघरू का जोड़ा जेब मे रखता ट्रेन में चढने से पहले बाँध लेता था।

जिस समय वह लम्बे डग भरता हुआ जाता, लगता सचमुच ही किसी राजदरबार में जा रहा है। कितना उत्साह, कैसी प्रसन्नता।

निकलते समय अक्सर पूछता, 'पवन कहाँ है ?'

पवन की माँ कहती, 'और कहाँ होगा, वहीं बूढ़े बरगद तले।'

हाँ, घर से थोड़ी ही दूर पर एक विशाल वट-वृक्ष सालों पुरानी अपनी शाखा-प्रशाखाएँ फैलाए, जटाओं से लदा-फँदा खड़ा था। पवन सुबह उठते ही धोती की खूँट में लाई बाँध कर कॉपी पेंसिल लेकर वहीं चला जाता था।

खाता, लिखता और बैठा रहता।

पिता हाई स्कूल में भर्ती न करने पर भी किताब बेचने वाले से कभी-कभी एक आध किताबें खरीद लाता है लड़के के लिए। दाम ज्यादा होने पर भी देता है। कहता है, 'मेरे लडके को खिलौनों का शौक नहीं है, शौक है तो पढ़ने का, किताबों का, चलो वही खरीद दूँ। मन-ही-मन सोचूँगा। बैट-बॉल खरीद रहा हूँ, पतग खरीद रहा हूँ। आखिर उसमें भी तो पैसा लगता। देखो न, उस घर के बडे

भइया के छोटे लडके को, दोनों वक्त खाना जुटता नहीं है, रोज दो-तीन पतगे चाहिए।'

छबीरानी मुस्कुराकर कहती, 'उसी के साथ माँ के गुणों का भी बखान करो न। बड़ी दीदी को इस हालत मे भी रात-दिन पान-तम्बाकू चाहिए।....... है पवन की माँ म वह बुरी आदतें ?'

रजनी विगलित भाव से उस गोरे हॅसते चेहरे को निहारता रह जाता। गरीब के यहाँ शोभा नही देती है, मानो कीचड़ के बीच कमल का फूल। अच्छे खाते-पीते घर में ब्याही होती तो रूप की छटा देखते बनती। रूप के कारण ही उसके माँ-बाप ने नाम रखा था छबीरानी।...भाग्य का फेर था कि बस नाम रखने के बाद ही दोनों खत्म हो गए। ननिहाल में पली। मामा शरीफ था। रानाघाट मे जज के कोर्ट मे मुलाजिम था। भॉजी को अपने बच्चों के साथ स्कूल भेज दिया, परन्तु अभागी छबीरानी...मामा भी चल बसे। मामी ने 'मनहूस' 'राक्षसी' इत्यादि इत्यादि की संज्ञा देत हुए रजनी-समान्त के साथ जल्दी से शादी कर दी।

हालाँकि तब रजनी का बाप जिन्दा था। रजनी अपने बाप की चाय-बिस्कुट की दुकान पर बैठता था, पहरा देता था। दुकान स्टेशन में थी। बाप ने धूमधाम से रजनी की शादी की थी और सुन्दरी बहू के कारण लोगो ने तारीफ भी की थी। गृहिणी रहित गृह का भार सहज ही अपने कंधों पर लेकर छबीरानी ने ससुर का मन मोह लिया।

उसके बाद बहुत कुछ हुआ। दो ननदों की शादी हुई, देवर रानीगज के कोयले की खान में नौकरी करने भाग गया, ससुर अपनी पहली बीवी की विधवा बड़ी लड़की के पास रहता है। लड़की के पास जमीन-जायदाद है, देखभाल करने वाला कोई वाला कोई नहीं है, इसीलिए पिता ने स्वेच्छा से गृह-त्यागा है। वहाँ वह सुख से है।

और रजनी भी पुत्र-पत्नी के साथ सुखी है। पिता पुत्रवधू को जितना प्यार करते थे उतना ही उस पर शासन भी। ससुर के जमाने मे ही छबीरानी का गौरवर्ण पीतल के रंग में बदल चुका था। फिर भी, हॅसती है तासे गालों में गड्ढे आज भी पड़ते हैं, बाल अभी भी घुटने तक लम्बे हैं।

रेल का फेरी वाला रजनी प्रायः अपनी पत्नी के लिए सुगन्धित तेल ले आता है। कहता, 'वह आदमी कह रहा है इस तेल के इस्तेमाल से बाल नहीं झरेंगे, न ही चाँद निकलेगी।'

खुशी से पागल छवीरानी तेल का शीशी लेकर पति को कृत्रिम डांट लगाती, जबरदस्ती फालतू का खर्चा कर आने के लिए।

परन्तु बाद मे बिगड़ती, 'तुम्हारा तेल खत्म होने से पहले तो मेरे बाल खत्म हो जाएँगे। मुझे नारियल का तेल ही ला दो।'

बार-बार ठगा गया रजनी अब वह पत्नी के लिए कुछ नही लाता है, परन्तु पत्नी है उसे बडी प्यारी। छवीरानी रोज ही जिद्द करती है, मसाला कूट देने के लिए। कहती, 'तुम मर्द हो, घर और बाहर का इतना काम करते हो। और कितना करोगे लाओ मुझे दो।'

रजनी कहता, 'नहीं, रोज-रोज इतना भारी लोढा हिलाते-हिलाते तुम्हारे मोम जैसे हाथो की अँगुलियाँ बदसूरत हो जाएँगी। हाथ मे गाँठ पड़ेगी।'

गुस्सा होकर छवीरानी कहती, 'मोम जैसे हाथों का क्या मैं अचार डालूँगी ?'

काला रूखा चेहरा, मुँह पर चेचक के दाग, मसालेदार लाई-चने वाला रजनी सामन्त अलोकिक हँसी हँसकर कहता, 'ऐसा क्यो सोचती हो ? नरम अँगुलियो से सोते वक्त मेरी पीठ सहला देगी, उसी से दाम बढ जाएगा तेरे हाथ का।'

लड़का बिल्कुल माँ की तरह देखने मे है।

रजनी इस पर मुग्ध है।

कहता, 'माँ के चेहरे वाला लड़का सुखी होता है। मैं इसीलिए पवन की फिक्र करता हूँ।'

कभी-कभी अगर जरा पहले निकलता तो चक्कर काटकर बूढ़े वटवृक्ष की तरफ से होकर स्टेशन जाता। देखता, लड़का चुपचाप बैठा है, हाथ में कागज कॉपी।

मन-ही-मन सस्नेह हँसकर कहता, 'पगला कही का।' सोचता, बड़ा होगा तो अक्ल ठिकाने आ जाएगी।..मैं ही इस उम्र में क्या था ? पिताजी की दुकान की देख-रेख करने बैठता तो बिस्कुट का डिब्बा ही सफाचट कर डालता था। न सिर्फ खुद खाता, दोस्तों को भी बुलाकर खिलाता था।

तब उस खिलाने में कैसा गर्व का अनुभव होता था ?

रजनी अपने लडके के मन की बात नहीं जानता है। शायद उसमें इस बात की अक्ल ही नही है कि पता करना चाहिए। वह अपने हिसाब से लडके का मन समझकर निश्चिन्त हो गया है। और दो दिन बाद पागलपन ठीक हो जाएगा।

कभी-कभी मन करता कि लड़के से कहे, 'रात-दिन किताब से देख-रेख कर उतारा करता है, मेरे व्यवसाय के लिए दो लाइन बढ़िया-सा लिख दे न ? मेरे जो है सब पुराने हो गए हैं।'

लेकिन जाने क्या हो जाता है जब लडका सामने होता है। मुँह की बात मुँह मे ही रह जाती है। इतना-सा लडका पर कितना गम्भीर है। माँ के साथ जब बात करता है फिर भी कभी हँस लेता है पर पिता के पास बैठता है तो गम्भीर।

ओर पिता के धधे के बारे में तो बात ही नही करता है। छबीरानी कहती, 'लडके को दुलार बैठाए रखने से बाप का कतव्य पूरा होगा। उसे करने के लिए काम दो। देख लेना, मन लगाकर काम करेगा।'

रजनी ने बीवी की बातों मे आकर लडके को बुलाया।

पवन पास आकर खड़ा हुआ।

बिल्कुल माँ की शक्ल। गोरा उजला रग।

देखकर मन ममता और आनन्द से परिपूर्ण हो जा ता है।

सस्नेह बोला, 'एक काम तो कर देगा। जगन्नाथ बाबू की दुकान पर जा। कहना, इस हफ्ते का माल मुझे दे दीजिए पिता जी बाद में आकर दाम दे जाएँगे।'

रजनी हर हफ्ते माल लेता है। चना, मूँग, उरद, सरसो का तेल, मिर्च, काली मिर्च और भी बहुत कुछ। जगन्नाथ की कॉपी पर चढ़ा रहता, दाम, वजन। रजनी खुद ही सब करता है। कोयला लाता है, लकड़ी काटकर ढेर लगाए रखता हे, गाय की सेवा करता है, आँगन की सफाई करता है। रजनी भूत की तरह मेहनत कर सकता है। लड़के से यह काम कहने का उद्देश्य था उसका भला सोचना।

लेकिन यह सुनकर कि जगन्नाथ के यहाँ से चना, मूँग, उरद लाना पडेगा, लडके का कोमल चेहरा सख्त पड़ गया। जिस समय रजनी ने बात कही थी, वह

चली काट रहा था। पवन झट बोल उठा, 'इससे अच्छा है मैं लकडी काटूं। तुम जाओ।'

'तू लकडी काटेगा ?' रजनी जोर से हॅसने लगा, 'इसे तू सजा समझ रहा है ? अरे सुनती हो ? अपने लडके की बात सुनी तू ने ? दुकान पर बाप जाए वह लकडी काटेगा।'

पिता जी को यही एक बीमारी है।

हर बात मॉ को बुलाकर बताऍगे।

पवन चिढ़कर बोला, 'इसमे हॅसने की क्या बात है ? उन्हे मै पहचानता-वहचानता नहीं हूॅ।'

रजनी गम्भीर भाव से बोला, 'अरे बा-बा, जाओगे नहीं, देखोगे नही, तो कोई पहचानेगा कैसे ? जगन्नाथ बाबू तेरे घर आऍगे तुझे पहचानने ? इसके अलावा दुकान पर मालिक तो रहते नहीं हैं, रहते है कर्मचारी लोग और उनका भतीजा। उनसे क्या शर्माना ?'

पवन अपने बाप के मुँह पर यह न बता सका कि शर्म तो उन्ही से है। खासतौर से उस भतीजे से। नम्बरी बदमाश है वह।

पवन क्या बताए ?

रास्ते मे पवन को देखत ही, एकाएक मुंह के दोनों तरफ हाथ लगाकर ठीक रजनी के आवाज की नकल करके बोल उठेगा, 'मसालेदार ! मसालेदार लाई ! आओ आओ बुढा-बुढी और जवान।'

पवन ज्यादा बोलता नहीं है। इसीलिए कहता है, 'मैं तो कह रहा हूॅ कि लकड़ी काट दूंगा।

'क्यो नहीं। फिर पॉव कुल्हाड़ी मार लेना। मतलब हुआ मै खुद अपने पॉव पर कुल्हाड़ी मार लूॅ। क्यों, उस काम में तुम्हें कौन-सा कष्ट होगा ? सामान तौल में दस पॉच मन भी तो नहीं है।'

पवन बोला, 'मैने क्या ऐसा कहा है ?'

'तब फिर ?'

रजनी बोला, 'असल मे तू है नम्बरी घर घुसना। इधर तेरी मॉ कहती है लड़की को दुलार के मारे बन्दर बना डाला है, उससे काम करवाओ।'

सुनकर पवन का चेहरा लाल पड गया।

झट से पवन बोल पड़ा, 'तुम्हारे मसालेदार लाई-चना वाला कोई काम मे नहीं करूँगा।'

रजनी गूँगा हो गया।

हाथ में पकडी कुल्हाडी पत्थर की हो गई जैसे। थोडी देर तक मुँह खोले रहने के बाद वह बोला, 'मेरे मसालेदार लाई चने का कोई काम तू नही करेगा ? मै क्या तुझसे मसाला पीसने को कह रहा हूँ ? चना कूटने को कहा है मैने ? प्याज कतरने के लिए कह रह हूँ क्या ?'

पवन जवाब न देकर सिर झुकाए खडा रहा।

छवीरानी चौके से बाप-बेटे के बीच हो रहे तर्क-वितर्क की गन्ध पाकर बाहर निकल आती है। पूछती है, 'क्या हुआ ? कैसी बात हो रही है ?'

रजनी उदास भाव से बोला, 'तुम्हारे कहने पर लड़के को काम देने चला तो अच्छा ही नतीजा सामने आया है।...जगन्नाथबाबू की दुकान से हफ्तावारी सामान लाने के लिए कहा तो कहता है कि तुम्हारे मसालेदार लाई-चने का कोई काम नहीं करूँगा। उससे अच्छा लकड़ी काटूँगा।'

छवीरानी ने तीक्ष्ण दृष्टि से लड़के की तरफ देखा। उसके बाद हल्की आवाज में कहा, 'ठीक ही तो कहा है। वह वेचारा किसी को जानता-पहचानता नही है। फिर उसे तौल में भी ठग सकता है। खुद एक बार साथ ले जाकर पहचानवा दोगे तब न ? जा पवन, तू जो कर रहा था कर जाकर। काम मै तुझे दूँगी।'

पवन धीरे-धीरे वहाँ से चला गया।

रजनी पत्नी का मुँह देखते रहने के बाद बोला, 'यह क्या था पवन की माँ ? मेरी गृहस्थी का कौन-सा काम मेरे व्यवसाय से नहीं जुड़ा है ? अगर उसे ही नहीं करेगा...'

करुण स्वरों में छवीरानी बोलीं, 'क्या करूँ बोलो ? तुम्हारे इस काम मे उसका मन नहीं लगता है। लड़के की नजर ऊँची है। बाबू लोगों की तरह उसका बाप भी डेलीपैसेन्जरी करता, रेल पर चढ़कर कलकत्ते जाता, दफ्तर में काम करता तो उसका भी मन लगता।'

रजनी सहज ही में उत्तेजित नहा होता है। लेकिन आज हुआ।

बोला, 'ओः बाबू। लोगों के बारे में रजनी से ज्यादा और कौन जानता है ? महीन की बीस तारीख से रजनी के पास बाबू लोग उधर माँगना शुरू कर देते हैं। महीना खत्म होने पर चुकते है।..साधारण-सी लाई ही तो बेचता हूँ लेकिन कोई बताए तो सही कि किस बाबू ने रजनी की तरह धान की जमीन खरीदी है ? किसके पास गाय है ? इस बार सोच नहीं रहा हूँ कि सोने वाले कमरे की छत पक्की करवाऊँ ? दफ्तर के काम से यह सब हो पाता है ? .बस वही साफ-सुथरे कपड़े तक ही सीमित है।'

छवीरानी ने अपने पति को कम ही उत्तेजित होते देखा है, इसीलिए जल्दी से बोली, 'बच्चा है, वह क्या इतना सोच-समझकर कुछ कह सकता है ? साफ-सुथरे कपड़े पहने बाबू लोग ही उसे देखने में अच्छे लगते है—बस !'

रजनी उसकी बात सुनकर हँस दिया। बोला, 'यही देख रहा हूँ। तुझे ही चाहिए था किसी बाबू से शादी करना।'

छवीरानी भौंहें सिकोड़, आँखें नचाकर हँसी, 'आहा, क्या बात कही है।'

रजनी सामन्त फिर भूल गया बेटे की बात।

निश्चिन्त हो गया।

बड़ा ही खुशमिजाज आदमी है वह। हर समय खुश रहता है। और बस पवन इसी बात पर गुस्सा होता है। उसकी समझ में यह नहीं आता है कि इतने छोटे काम से पवन का बाप इतना खुश कैसे रहता है, सन्तुष्ट क्यों रहता है ? यह भी क्या कोई जिन्दगी है ?

और इस जगन्नाथ बाबू को पवन इन्सान नहीं मानता है। रुपया कितना भी क्यों न रहे। लगता है यह भैंस है। न सिर्फ चेहरे से, स्वभाव से भी। घुटने तक की धोती, विशाल शरीर पर ढीली-ढीली बडी-सी एक बन्डी पहन कर गद्दी पर बैठा रहता। पखे के डंडे से पीठ खुजलाता, रह-रहकर छींकता और बैठा रहता। इकट्ठे पाँच-सात कच्चे नारियल का पानी ही पी जाता, जिसकी धार मुँह के दोनों ओर से बहती रहती। सब के सामने लम्बा-सा गन्ना गाय की तरह चबा-चबाकर खाता और रस चूसता। पवन उसकी तुलना भैंस से ही करता था।

पवन की कॉपी में बहुत लोगों के चित्र हैं। कभी-कभी चित्र बनाकर उसके नीचे परिचय लिख देता था।

शहर के किसी विशिष्ट घराने मे पेदा हुआ तो शायद उसके इन चित्रो को देखकर लोग खुश होते और किसी पत्रिका के शिशु विभाग मे ये रेखाचित्र प्रकाशित भी होते। शहरी माता-पिता उसे ले जाकर चित्रकला प्रतियोगिता में बेठा आते और लडके को पुरस्कार मिलने पर उत्सव मनाते।

पर पवन तो है लोकल ट्रेन में मसालेदार लाई-चने मसालेदार बेचने वाले का लड़का। इसीलिए उसकी प्रतिभा पर्दे के पीछे ही रह गई है। सिर्फ पवन का मित्र मनतोप ऑखें वड़ी-वडी करके देखते हुए कहता, 'तू न वड़ा होने पर खूब बडा आर्टिस्ट बनेगा।'

पवन कहता, 'हट ! जो गाना गाते है, सिनेमा करते हैं उन्हें आर्टिस्ट कहते हे।'

मनतोष कहता, 'नही रे, जो लोग तस्वीर बनाते हैं उन्हे भी कहते है। असल में उन्ही को आर्टिस्ट कहते हैं। मॅझली दीदी ने बताया है।'

मनतोप और पवन की दोस्ती—एक आश्चर्यजनक घटना ही है।

क्योकि मनतोष पवन के लिए 'दूर गगन का तारा' समान है। मनतोष है हाई स्कूल के अंग्रेजी के अध्यापक परितोष बनर्जी का लड़का।

फिर भी मनतोष इस बूढ़े वटवृक्ष के नीचे भागकर आता है शरण लेने। और पवन मनतोष की महिमा पर मुग्ध है। कहता, 'तेरे बदन पर स्कूल की हवा लगी हुई है। तेरे शरीर को छूने से पुण्य मिलेगा।'

मनतोष उसकी बात की अवहेलना कर कहता, 'स्कूल मुझे फूटी ऑख नहीं भाता है। स्कूल जाने के नाम से मुझे नींद से उठते ही रोना आने लगता है। हमेशा से। फिर भी, मास्टर का बेटा बनकर पैदा होने के कारण मुझे स्कूल जाना ही पड़ता है। बाद में कॉलेज भी जाना पड़ेगा और पास करके आगे की पढाई भी करनी होगी। फिर शायद बड़े होकर पिताजी की तरह मास्टर बनूँ।'

फिर हँसकर कहता, 'कितनी बार फेल होने की कोशिश की है, जान बूझकर गड़बड़-सड़बड लिख आता, कोरा कागज छोड़ आता फिर भी न जाने कैसे पास होकर नए क्लास में चला जाता हूँ। फेल मार्का बन ही नहीं सकता हूँ, मास्टर का लडका हूँ न ?' कहकर फिर हॅसता।

पवन इस हॅसी का अर्थ नहीं समझ पाता।

बस उत्तेजित होकर पूछता, 'तुझे पढ़ना-लिखना अच्छा नहीं लगता है ?'

होठ उलटकर मनतोष कहता, 'बिल्कुल नही। किताब देखते ही मेरा दिमाग गरम हो जाता है।'

लम्बी सास छोडकर पवन कहता, 'मैं अगर तेरी जगह पैदा हुआ होता

'मेरी जगह . ', मनतोष कह उठता। 'मै भी बिल्कुल यही सोचता हूँ, मै अगर तेरी जगह पैदा हुआ होता। तुझे कितना आराम है, पढ़ना-लिखना नही पडता है।'

म्लान मुख से पवन बोला, 'इसे तू आराम कहता है ?'

'हाँ, कहता हूँ।' सहज भाव से मनतोष बोला, 'मै अगर तेरी जगह होता

मजे से पिताजी के साथ रेल पर घूमा करता। एकाएक किसी स्टेशन पर उतर पड़ता, नए-नए लोगों से दोस्ती करता, खजूर का रस पीता, खेतो से कच्ची मटर तोडकर खाता, फिर ट्रेन आती तो चढ बैठता।'

पवन जरा कृपाभाव से हँसकर कहता, 'जैसे सोच रहा है वैसा मजा आता नही है।'

मनतोष कहता, 'जैसा जी चाहे, वैसा करने में ही मजा है रे। देख न, तू यहाँ बैठा चित्र बना रहा है, तुझे कोई डाँटेगा नहीं और मैं भाग आया हूँ, लौटने पर मुझे डाँटा जाएगा। कितनी लाँछना होती है, देखने पर ही समझेगा।'

पवन पूछता, 'तब तू आता क्यों है ?'

'तेरे साथ बातें करना अच्छा लगता है इसीलिऐ।' कहते हुए मनतोष पवन की कॉपी उठाकर देखने लगता, 'देखूँ, और किसका चित्र बनाया है ?'

यहा कॉपी मनतोष ने पवन को उपहार स्वरूप दिया है। कभी-कभी वह उसे कॉपी, किताब, कागज लाकर देता है। हालाँकि शुरू-शुरू मे पवन बिना पैसे के कुछ भी नहीं लेना चाहता था, किन्तु जब मनतोष ने कुट्टी कर लेने की धमकी दी तो लाचार होकर लेने लगा।

मनतोष ने पूछा था, 'किसका चित्र बनाया है।' यह उनका एक खेल था। जैसे जगन्नाथ साहा का चित्र बनाकर उसके नीचे लिख रखा था, 'भैस', वैद्य के चित्र के नीचे लिखा था 'जगली सुअर' हालाँकि केवल पवन ही ऐसा नहीं कहता

है, महेशतला गॉव के सभी कहते है, 'भोला वैद्य बिल्कुल जगली सुअर लगता है।'

अस्पताल के डॉक्टर बाबू खगेन बोस का चेहरा बनाकर उसके नीचे पवन ने लिखा था ''ऊँट'। उनका चेहरा ऊँट से काफी मिलता है।

पड़ोस की एक दादी लगने वाली महिला के चित्र के नीचे 'तोता' और भूद्दार चक्रवती की पत्नी के चित्र के नीचे 'श्वेतहसती' लिख रखा था। नवीन राय के छोटे बेटे का चित्र भी था, जिसके नीचे लिखा था 'बकरी का छौना।'

छवीरानी के चित्र के नीचे लिख रखा थी पवन ने, 'बोल री बहू बोल' बस पिता की तरफ हाथ नहीं बढाया था उसने, पता नहीं क्यो ?

पवन को क्या पता था ऐसे चित्रो को कहते है, 'कार्टून' और चित्रकार को कहते है 'कार्टूनिस्ट' मनतोष को पता था।

वह कहता, 'चेहरा और स्वभाव मिलाकर तू जानवर और चिडियो से मिलता-जुलता आकार कैसे बना लेता है ? तू कलकत्ते में होता तो अखबर वाले तुझ रख लेते।'

पवन दुखी होकर कहता, 'तेरा दिमाग फिर गया है।'

मनतोष बड़े उत्साह से कहता, 'सच कह रहा हूँ रे, अखबारो में कार्टूनिस्टो की बड़ी कद्र होती है।'

पवन आश्चर्य से पूछता 'किनकी ?'

मनतोष पन्ने उलटते हुए कहता, 'मै मॅझली दीदी से तेरी बात करता हूँ तो उसकी बडी इच्छा होती कि तेरी यह कॉपी देखे। दीदी हॅसकर कहती है, 'अपने दोस्त से कह हमारे घर के लोगों का कार्टून बनाए, तब सबके मन का असली परिचय मालूम हो जाएगा। दीदी कहती हैं पिताजी की तस्वीर बनाने पर नाम रखा जाएगा. .', ·

कहते-कहते रुक गया, 'नहीं बाबा, नहीं बताऊँगा।'

'रहने दे, कहने की जरूरत नहीं है।' पवन ने लोभ संवरण किया, 'बहुत बुरा नाम सोचा है न।'

मनतोष कहता, 'मॅझली दीदी का कैसा चित्र बनाएगा यह सोचा। उसे देखा है न ?'

पवन ने सिर हिलाया

ज्यादा निकलता नहीं है न कलकत्ते मे मामा के यहा रहती है इम्तहान हो गए हैं तभी आई है। अच्छा तू मेरी तस्वीर बना सकता है ?'

'क्यों नहीं ?'

झटपट दो चार लाइने खीची और एक चित्र उभर आया कागज पर।

शुरू में मनतोष का चित्र उभर आया कागज पर।

शुरू में मनतोष उस चित्र को अपना मानने को तैयार नहीं हुआ, बाद में बोला, 'अच्छा, मेरा नाम क्या रखेगा ?'

'कुछ सोचा नहीं है।'

'लिख दे 'प्रजापति'।

'प्रजापति ? तू क्या प्रजापति लगता है ?'

मनतोष बोला, 'लगता नहीं हूँ पर मेरा मन तो प्रजापति की तरह उड़ता-फिरता है।'

मनतोष और पवन की इच्छाओं में जमीन-आसमान का अन्तर है, परन्तु मित्रता का बन्धन बड़ा गहरा है।

मनतोष की माँ अर्थात् परितोष बनर्जी की पत्नी अपने बेटे के पतन का हिस्सा पति से छिपाती थीं, लेकिन ननद से बातो-ही-बातो में अफसोस प्रकट करते हुए कहती थीं, 'तुम्हारे भतीजे को इसी दोस्त से इतना लगाव है। लड़की होती तो कहती 'राधिकाजी।''

ननद कहती , 'भइया को अगर पता चला कि बेटा लोकल ट्रेन के लाई-चना वाले के लड़के के प्रेम में आकण्ठ डूबा हुआ है तब तो वे उसे जिन्दा गाड़ डालेंगे और हमें भी काट डालेंगे भाभी।'

काट डालेंगे, 'ठीक ही कहा है शायद। भाई के स्वभाव से तो परिचित है ही।

स्कूल जाने का वक्त हो गया है, कहकर मनतोष चला गया। पवन ईर्ष्यातुर दृष्टि से उधर देखता रहा। जैसे स्वर्गलोक के यात्री को पाताल लोक का इन्सान देखा करता है।

अपने पीतल के घुघरू को रजनी ने इमली के पानी मे भिगो रखा था उसी को वह रगड़-रगड़कर साफ रहा था।

छवीरानी बाप-बेटे को बार-बार खाना खा लेने के लिए बुला रही थी, लेकिन उन्हें आता न देख चिल्ला उठी, 'तब फिर मैं चौके में जंजीर लगाकर जा रही हूँ।'

सुनकर पवन कमरे से बाहर निकल आया। बाहर आते ही ठिठककर खड़ा हो गया। बोला, 'पिताजी अगर तुम इन्हें न पहनो तो क्या तुम्हारा सामान बिकेगा नहीं ?'

'सामान' बोलता है वह—लाई-चना नहीं।

रजनी ने आश्चर्य से उसे देखा फिर कहा, 'बिकेगा क्यों नहीं ? इतने दिनो से यही काम कर रहा हूँ, सभी पहचानते हैं। फिर भी इसकी आवाज से महफिल इकट्ठा होती है, लोगों को भी मजा आता है।'

पवन बोला, 'जिसमें लोगों को मजा आता है उसमें तुम्हें भी मजा आता है ?'

रजनी अपने बेटे के मन के रास्तों को नहीं पहचानता है। वह तो बस एक ही रास्ता जानता है और उसी पर चलता है। भीगे घुँघरुओं के जोड़े को धोती के छोर से पोंछते हुए हँसकर बोला, 'क्यों नहीं, लोगों के मजे में ही मुझे भी मजा मिलता है।'

तुम्हें शर्म नहीं आती है ?'

अब रजनी गम्भीर हुआ।

बोला, 'नहीं स्वाधीन ढंग से कमाता हूँ, खाता हूँ। किसी को न ठगता हूँ, न बेईमानी करता हूँ, चोरी चक्कारी या झूठ नहीं बोलता हूँ...तब फिर शर्म किस बात की ?'

पवन का चेहरा फीका पड गया. 'और कोई बाँधता है यह सब ?'

रजनी, घुँघरुओं के जोड़े को दीवाल के कील मे टँगी अपने रंग-बिरगे कमीज की जेब में डालकर हँस, 'सभी बाँधते है। जो भी व्यवसाय करता है वही बाँधता है। कोई प्रत्यक्ष कोई अप्रत्यक्ष। बिना बाजे-गाजे या शोर-गुल के कहीं किसी को जगह मिल पाती है ?'

छवीरानी फिर जल्दी करने को कहती हैं।

रजनी जाकर खाने बैठा।

पवन भी।

गिलास के पानी से साथ धोते हुए रजनी हँसकर बोला, 'तेरा लड़का अपने बाप की वजह से बड़ा परेशान है, समझी पवन की माँ।'

पवन की माँ बिगड़कर बोली, 'कैसी बेतुकी बातें करते हो ?'

पवन सिर झुकाए खाता रहा।

उसके उठ जाने के बाद छवीरानी बोली, 'उस चीज को बिना पहने अगर काम हो सके तो न पहनो।'

रजनी शायद उस बात को भूल ही गया था इसीलिए आश्चर्यचकित होकर बोला, 'कौन-सी चीज ?'

अरे वही तुम्हारे घुँघरू...'

रजनी बोला, 'तुम भी बात का बतंगड़ बनाती हो। अरे पवन ने छोड़ने को कहा है तो क्या मैं छोड़ू दूँगा ? व्यसाय में 'शो' नहीं होता है ? तुम पब्लिक के स्वभाव को क्या जानती हो ? हमेशा किसी चीज को देखने वाले उसी चीज को देखना चाहते हैं। जात्रा में जो हमेशा राजा का पार्ट करता है उसी को राजा का पार्ट करना पडता है, जो भिखारी बनता है उसे भिखारी और जो जोकरपना करता आया है उसे जीवन भर जोकरी ही करनी पड़ेगी। इसीलिए रजनी सामन्त भी अब अपना जोकरपना नहीं छोड़ सकता है—समझी ? साफ-सुथरे कपडे पहनकर चुपचाप खड़ा होवूँगा तो कोई आँख उठाकर देखेगा तक नहीं।'

'क्या पता।' कहकर छवीरानी वहाँ से उठ आई।

मनतोष के जाने के बाद बहुत देर तक पवन गहरे सूनेपन से घिरा रहा। मनतोष की मँझली दीदी, महिला होकर भी इम्तहान देकर आई है। अभी घर आई है पर आगे पढ़ने के लिए कॉलेज में दाखिला लेगी। पास होकर बड़ी नौकरी भी करे शायद।

आश्चर्य है, ऐसी बहन का भाई होकर मनतोष लिखना-पढ़ना नहीं चाहता है।

पवन का दिल रो उठा।

अभी पवन को कुछ देर तक बैठ रहना है जब तक पिताजी नहा जाएंगे वह घर नहीं लौटेगा। पिता की वह बेहूदी सज-धज, गले मे लटका बक्सा, पवन सहन नही कर पाता है। इसके अलावा चलते वक्त माँ के साथ जाने कैसा इशारा करते हैं, यहाँ तक कि पान का बीड़ा लेते समय लगता है कि उसमे भी कोई राज है। पवन को यह सब फूटी ऑख पसन्द नहीं है।

उसे लगता है माँ कोई बन्दिनी राजकन्या है पिता शापग्रस्त विदूषक। हे ईश्वर, पवन के पिता ने अपने पिता की तरह चाय की दुकान क्यों नहीं खोली ?

कुछ दिन पहले शीतला चला गया था रामायण पाठ सुनने। उस समय सीता हरण का पाठ हो रहा था। एकाएक वह बात याद आते ही उसने अपनी कॉपी निकाली।

मनतोष की मॅझली दीदी रोज ही आने को कहती थीं पर आई कलकत्ता लौटने एक दिन पहले।

आगे-आगे मनतोष, उसके पीछे उसकी मॅझली दीदी। पवन ने जैसे कोई आश्चर्यजनक घटना देखी हो। ऐसी सुन्दर, गोरी चिट्ठी, साड़ी पहनी, चश्मा लगाकर आई महिला मनतोष की सगी बहन है ? कैसा भाग्यवान है मनतोष।

हालॉकि आज तो पवन भी भाग्यशाली कहलाएगा, ऐसी देवी-प्रतिमा जैसी लड़की, स्वेच्छा से उसके पास आई है। उसे चित्र बनाते हुए देखने।

'ये मेरी मॅझली दीदी है।' मनतोष ने हॅसकर बताया। उसी क्षण पवन की समझ में नहीं आया कि वह क्या करे। हाथ जोड़कर नमस्ते करते देखा था लेकिन स्वयं कभी हाथ नहीं जोड़े थे। पॉव छूकर प्रणाभ करने की आदत तो थी, परन्तु न जाने क्यों ऐसा भी नहीं कर सका। बस मूर्खो की भांति हॅसकर रह गया।

मॅंझली दीदी अपने सुन्दर चश्में के पीछे छिपी सुन्दर आँखों से उसे देखकर बोलीं, 'सुना है, तुम बड़े मजेदार कार्टून बनाते हो ? मनु के मुँह से सुना करती हूँ, रोज सोचती हूँ कि आऊँगी...'

मनतोष बोल उठा, 'हॉ कल चली जाएगी तभी आज होश आया है।'

कल चली जाएँगी ?

पवन का हृदय जोर से धड़क उठा।

गरमी के दिन थे, शाम ढल रही थी। पृथ्वी ने मानो अपने को सुनहरी चादर से ढक रखा हो...असंख्य जटा-जुट वाला यह वृद्ध वटवृक्ष...जिसके नीचे कभी किसी ने पक्का चबूतरा बनवा दिया था, ढलते सूरज के साथ आँख-मिचौनी खेल रहा था। उस टूटे-फूटे चबूतरे को साफ-सुथरा कर पवन ने बैठने की अच्छी जगह बनाई थी। देखकर सचमुच ही अच्छा लगता था।

मँझली दीदी ने मुस्कुराकर कहा था, 'वाह, तुम्हारा आश्रम देखकर तो मुझे ईर्ष्या हो रही है।

यूँ पवन निर्बोध नही है, परन्तु इस दीपशिखा ने उसे मूर्ख ही बना दिया। इसीलिए विमूढ़-सा होकर बोला, 'आश्रम माने ?'

मनतोष बोला, 'आश्रम जैसा ही तो लग रहा है। तू बैठा भी तो है बाल्मीकी ऋषि-सा।'

मँझली दीदी जल्दी से बोल उठी, 'या फिर कृतिवास-सा। तुम कभी फुलिया गए हो पवन ?'

पवन सिर हिलाता है।

पवन कभी कहीं गया ही कब है ?

कभी-कभी दादा अपने पहली बीबी की लडकी के यहाँ से पोस्टकार्ड लिख भेजते है। उसमे लिखता है 'पवन को एक बार यहाँ भेज सकते हो। पराया घर तो है नहीं।'

दादा की उस लड़की का घर रामपुरा हाट में है। सुनकर पवन का मन खुश न होता हो ऐसी बात नहीं है, परन्तु रजनी ही उसे अपनी सौतेली बहन के घर भेजना नहीं चाहता है। छवीरानी भी कहती, 'हमेशा लिखते हैं, 'भेज सकते हो', एक बार भी नहीं लिखा 'भेज दे।' यह भी कोई बात हुई ? फिर जिसका घर हो वह तो कुछ कहती भी नहीं है।'

अतएव पवन का कहीं जाना हुआ नहीं।

मँझली दीदी बोली, 'मेरी मामीजी का मायका है फुलिया में। हम एक बार वहाँ गए थे। वहाँ न, एक बहुत पुराना बरगद का पेड़ है। उसे पेड पर एक बोर्ड लगा हुआ है। जिस पर लिखा है कि 'इसी वटवृक्ष के नीचे बैठकर कवि कृतिवास ने रामायण की रचना की थी।' तुम्हें देख मुझे वही बात याद आ गई।

मनु कह रहा था तुम केवल चित्र नहीं बनाते हो, लिखते भी हो।...देख लो, मैंने कितनी ठीक बात कही है।'

तब तक मनतोष पवन की कॉपी निकालकर मँझली दीदी को चित्र दिखाने लग गया था। देखकर सचमुच कल्पना नाम की वह लड़की आश्चर्यचकित हुई। अवाक् होकर बोली, 'तुम इतना अच्छा चित्र बनाते हो ? मैं तो सोच ही नही सकती हूँ। उस पर इतने छोटे हो।'

फिर तो मँझली दीदी ने पवन के आगे एक कल्पनातीत स्वर्ग का द्वार ही खोल दिया।...कल्पना की मामीजी के भाई एक अखबार मे सह-सम्पादक हैं। यह कॉपी कल्पना उन्हे ले जाकर दिखाएगी और उन्हें पवन की उम्र और ज्ञान की बात बता कर आश्चर्य मे डाल देगी, फिर छपवाने की व्यवस्था करवा देगे वह।

फिर हँसते हुए कल्पना ने कहा था, 'केवल महेशतला मे ही नहीं, मनुष्य क

मध्य ऐसे जीव-जन्तु सर्वत्र रहते हैं। हर शहर मे हर गॉव में, यहॉ-वहॉ, हर जगह। इसीलिए पवन के ये चित्र, कलकत्ते के हर समझदार से आदर प्राप्त करेगे।

कॉपी ले जाने की बात सुनकर पवन का दिल धक् से हो उठा। ले जाने के मतलब हुए बिल्कुल ही ले जाना। मॅझली दीदी के मामीजी के भाई क्या वास्तव में इतनी तारीफ करेगे ? कही वे खो-वो न दे ?

इसीलिए पवन ने क्षीण स्वरों में कहा, 'धत्, आपकी मामीजी उसे देखकर हॅसेगी।'

'ये लो, मामीजी नहीं, मामीजी के भाई। बिल्कुल नहीं हॅसेंगे। वे बडे ही गुणग्राही व्यक्ति है, माने गुणियों का आदर करते हैं। मैंने एक बार दो-तीन छोटी-छोटी कहानियॉ लिखी थीं। मेरी कॉपी ले जाकर उन्होंने छपवा दी थी।.. .तुम्हारी ये चीज तो जरूर ले ली जाएगी। असल मे मैगजीन इसी तरह की है। नाम ही है 'रंग व्यंग'।

कल्पना ने कॉपी हथिया ली।

फिर भी और क्षीण स्वरों में पवन बोला, 'कलकत्ता पहुॅचकर फिर क्या आपको यह बेकार चीज याद रहेगी ? हो सकता है खो जाए ?'

सुनकर कल्पना 'नही नहीं', कर उठी।

बोली, 'खाने की तो बात ही नहीं उठती है, अपने सूटकेस में रखूँगी इसे। मै क्या ऐसी उत्तरदायित्वहीन हूँ कि ऐसी कॉपी खो दूँगी ?'

उसके बाद कल्पना कुछ देर और बैठी। बार-बार कहा कि पवन का घर देखकर उसे बड़ी ईर्ष्या हो रही है। कलकत्ते में मामा के चौमंजिले मकान में तो वह बँध जाती है, यहाँ तक कि महेशतला का यह मकान भी बिल्कुल बेकार है। ऑगन भर मे केले के पेड़ उगे हुए हैं और घर के आसपास नाते-रिश्तेदारों क टूटे-फूटे मकान है। पवन का घर कैसा खुले में है ? और घर के पास ही ऐसा बडा वटवृक्ष का होना तो कितने सौभाग्य की बात है।

कहने का मतलब ये कि रूपरंग और बातों से मँझली दीदी ने पवन को स्वप्नजाल मे कैद कर दिया। आशा और आशंका से धड़कता हृदय एक निश्चित प्रत्याशा को केन्द्र बिन्दु मान बैठा। मँझली दीदी जिस तरह से कह गई है, अविश्वास करने का तो सवाल ही नहीं उठता है।

पवन ने तो बार-बार ही कहा था, यह सब कुछ नहीं है, यूँ ही लाइनें खींच रखी है। मनतोष का दोस्त है तभी मँझली दीदी स्नेहवश का कॉपी को ले जा रही है। इस पर उन्होने बार-बार कहा था कि 'देखना इससे तुम्हारा कितना नाम होगा।'

वही अनिश्चित भविष्य पवन की ऑखों के आगे एक सुनहरे चादर की तरह झूलने लगा। मनतोष बेहद खुश था। घरवाले जो मनतोष को यह कहकर चिढ़ाते थे कि उसका दोस्त 'लाई-चने वाले का लड़का है' अब देख लें कि उसका मित्र कितना गुणी है ? गुणी न होता तो मनतोष उससे दोस्ती करता ? मनतोष तो यहाँ तक सोचने लगा कि पिताजी ने अगर सुना तो फल शुभ ही होगा। तब शायद मनतोष उनसे कह-सुनकर पवन की पढाई की कोई व्यवस्था करवा सकेगा। पिताजी और बंगला भाषा के मास्टर साहब मिलकर जो कोचिंग स्कूल चलाते है उसी में पवन को भर्ती कर सकते है। तब पवन का पढ़ने का शौक पूरा हो सकेगा।

इस तरह से तीन किशोर-किशोरी मधुर कल्पना की रचना करते हो।

पवन इसी भाव में विभोर थोड़ी देर भटकने के बाद, शीतलतला में हो रहे

रामायण पाठ को सुनने चला गया। यहाँ सारा गाँव ही टूट पड़ा था। स्त्री-पुरुष, बाल-वृद्ध। बस पवन के ही पिता-माता यहाँ नहीं आते हैं। इस समय पवन का पिता ट्रेन पर होता है और माँ बैठी एक बडा भगौना चना उबाल रही है।

पड़ोसी मे रामायण गान हो तो बच्चे और स्त्री-पुरुष काफी रात को घर लौटते हैं। उस वक्त कोई डाँटता भी नहीं है। डाँटने वाला पापी समझा जाता है। घर मे तो वही पड़े रह जाते है जो बूढ़े, बीमार या कामकाजी होते है, जैसे पवन के बाप-माँ। या फिर जगन्नथ साह। अथवा हाईस्कूल के अंग्रेजी सर।

उनके घर की सभी महिलाएँ आई थीं। दूर से पवन ने मँझली दीदी को भी देख लिया। तीन-चार महिलाओ के बीच में चल रही थीं। देखकर पवन खुश भी हुआ और थोडा चिन्तित भी। न जाने कॉपी सँभालकर रखी है या नही।

बाहर ही से पवन को अपने पिता को आवाज सुनाई पडी। हमेशा से ऐसा ही सुनाई पड़ता है। रजनी हर बात जोर से कहता है। गरीमत है कि पवन के घर के आस-पास और घर नही है। पवन के दादा के पास काफी जमीन है। खुले मैदान के एक छोर पर गौशाला है। उससे हटकर रिश्ते के ताऊ का घर है। वे पिताजी के इमामदस्ते की आवाज भले सुनते हों, गले की आवाज से वंचित रहते है।

पवन को इस बात से खुशी होती है।

पिता की हर बात पर पवन लज्जा का अनुभव करता ह। उनका बोलना, हॅसना, चलना...हर बात में न जाने कैसा नखरेपन का आभास रहता है। ताऊजी का बड़ा लड़का नवीन, जिसे पवन 'बड़ा भइया' कहता है, वह कितना समझदार है। सोच-समझकर बोलता है और हर समय कैसा दुखी-दुखी-सा लगता है।

गरीबों को तो ऐसा ही रहना चाहिए ? कम-से-कम पवन की बुद्धि तो यही कहती है। धीरे से आँगन का फाटक खोलकर पवन भीतर घुसते ही ठिठककर खड़ा हो गया। उसी की बात हो रही है।

पिता, उसके उठते ही जाकर वटवृक्ष के नीचे बैठने की बात पर ही शायद कह रहे थे, 'आवाज के कारण तुम्हारा बेटा घर छोडकर पेड के नीचे जा बैठेगा ? मैं पूछता हूँ--दुनिया में आवाज कहाँ नहीं है ? जहाँ काम होता है वहीं आवाज रहती है। आवाज पृथ्वी बेंधती आकाश की ओर उठ रही है। ध्यान से सुनो, हर

तरफ आवाज-ही-आवाज है। एक हिमालय पहाड की गुफा में जा बैठो तब शायद आवाज न सुनाई पड़े। जाओगी तुम ?'

पवन को अपने माँ की ही-ही करके हँसने की आवाज सुनाई पडी। उसी के साथ बात भी, 'हाँ, मैं जाऊँगी। कहा है न मैंने तुमसे। आवाज से चिढ तो तुम्हारे बेटे को है।'

पवन ने देखा है—उसकी बात छिडने पर, पिता माँ से कहते है 'तुम्हारा बेटा' और माँ भी यही कहती हैं। इसके मतलब उसका कोई आग्रही दावेदार नहीं है। सोच कर मन खिन्न हो गया। पवन नामक लडका अगर पैदा ही नही होता ?. .या फिर ताऊजी के लडको जैसा होता ?.. सारे दिन एक कँटिया लेकर पोखर के किनारे बैठा मछली पकड़ता। केष्टो को ही देखो न, उसी की उम्र का है, मछली पकडने के बहाने वहाँ बैठा रहता है।

कभी शाम को एक आध छोटी मछलियाँ लेकर घर लौटता। ताईजी उसी से खुश। रात के खाने मे कुछ समारोह की सृष्टि तो होगी।

पवन के यहाँ खाने-पीने की तकलीफ नही है। पवन का पिता रेलवे के बाजार से नाना प्रकार की चीजे लाता है। मछलियाँ भी बहुत लाता है। पवन इधर-उधर की चीजें पसन्द नहीं करता है, इसीलिए हलवाई के यहाँ से मिठाई वह जरूर लाता है। फिर भी पवन को लगता वह गरीब है।

यह दीनता का भाव एक दूसरी अनुभूति से उत्पन्न हुआ है।

पवन चाह कर भी भीतर घुस नहीं सका, मानो किसी ने उसके पाँव वही गाड़ दिए हों। क्योकि अभी भी उसका प्रसंग चल रहा था। रजनी कह रहा था, 'बेटा शायद भविष्य में अपने ही गुणों के बल पर आगे कुछ बन जाए। लोगो से तो सुना करता हूँ, कितने बड़े-बड़े लोगो के बाप मोची, या जूता पालिश करने वाले, लुहार या बढई थे। तब फिर सोचो जरा। दुनिया में असम्भव कुछ भी नहीं है पवन की माँ, मैं तो इतना ही कह सकता हूँ कि लडका अपने बाप का व्यवसाय नहीं करेगा।'

रजनी के स्वरों में हताशा ? या आक्षेप ?

छवीरानी ने बात बदलते हुए कहा, 'नही करेगा न करे। खाने भर को कर सके उतना ही काफी है।'

उसी क्षण पवन का मन ऐसे अनचखे स्वाद से भर उठा। आज ही पवन को एक अविश्वसनीय आशा की किरण दिखाइ दी है और आज ही पिताजी कह रहे है कि अनेक मशहूर लोगों के पीछे दीनता का इतिहास छिपा रहता है।

हो सकता है आगे चलकर पवन एक बडा भारी आर्टिस्ट बने या बनेगा कवि। तब शायद ही किसी को याद रहेगा कि कभी उसका पिता लोकल ट्रेनों मे घूमता जोकरी करता और मसालेदार लाई बेचा करता था।

'कवि' होने की बात पर जरा झिझक रहा था फिर कालीदास का इतिहास याद आ गया। माँ सरस्वती के वरदान से क्या नहीं होता है ?

सोचते ही सदा उदास रहने वाले पवन का मन सहसा प्रसन्न हो उठा। कल ही पवन के गुणों का भण्डार उस लडकी के चमचमाते सूटकेस में भरकर कलकत्ता चला जाएगा।

उसके बाद ?

उसके बाद क्या होगा पवन नही जानता है।

फिर भी लगता है ये भगवान की ही कृपा है। पवन स्वयं तो किसी को दिखाने गया नहीं था...एकाएक अपने आप सब हो गया।

अब पवन आवाज करके घर मे घुसा।

घुसते ही उत्साह से भर कर बोला, 'ओह, कैसा बढ़िया गाना हुआ। कितने लोग गए थे सुनने। तुम्ही लोगों को बस दिन-रात काम ही करना रहता है।'

बेटे को इस तरह से बोलते न जाने कितने दिनों से नहीं सुना था उन्होंने। पहले कभी वह हाट से या मेले से लौटने पर माँ से करता था, 'सब जाते हैं, बस तुम ही नहीं जाती हो। मुझे बड़ा खराब लगता है।' आज वैसी ही आवाज थी लडके की। माँ-बाप को बडा मधुर लगा सुनने में।

माँ हँसकर बोली, 'कुछ दिन और बीतने दो तब बेटे-बहू के कन्धों पर गृहस्थी लाद कर जाया करूँगी। गाना कथा सुनने।'

पवन क्या आज माँ-बाप के आगे अपने मन की बात बता दे ? आज की घटना ? मनतोष की मँझली दीदी द्वारा दी गई आश्वासनवाणी ?

नहीं। यह सम्भव नहीं।

कहने को बहुत कुछ कहा जा सकता है।

फिर माँ-पिताजी समझ ही कहाँ पाएँगे ? उससे तो अच्छा होगा एकाएक चौका देना। चौक जाएँगे जब मँझली दीदी की मामीजी के भाई पवन का नाम और तस्वीर छपवाकर भेजेगे।

अभी तो पवन की प्रतीक्षा ही करनी है। दुःसह प्रतीक्षा।

हर क्षण, हर पल

परन्तु क्या केवल पवन को ही प्रतीक्षा करनी है। संसार के नियमो से अनभिज्ञ उस तरुणी भी तो प्रतीक्षा थी।

मामी के भाई को ममेरे भाई बहनों की तरह उसे भी तो मामा ही कहना चाहिए था परन्तु न जाने किस सूत्र से कल्पना मामी के भाई को 'अशोकदा' पुकारती थी।

मामी भी कुछ नहीं कहती, पुकार रही है पुकार। अशोक की एक छोटी-सी पत्रिका है, नाम है 'रग-व्यंग। पत्रिका के सम्पादक का चरित्र भी इसी पत्रिका के अनुरूप है। अपनी बहन की भाँजी के मामले मे जितना उत्साही है उतना ही उसे परेशान करने में उसे मजा आता है।

शायद यह लोगों को मूर्ख बनाने की चेष्टा हो। सोचता होगा कि चिढाने से लोगो का ध्यान असली बात से हटा रहेगा। परन्तु 'लोक चरित्र' ऐसा है। उसे जो समझता है वह ठीक ही समझ लेता है।

शायद यह लोगों को मूर्ख बनाने की चेष्टा हो। सोचता होगा कि चिढाने से लोगों का ध्यान असली बात से हटा रहेगा। परन्तु 'लोक चरित्र' ऐसा है। उसे जो समझता है वह ठीक ही समझ लेता है।

फिर भी नए-नए प्रेमी दूसरों को 'अंधा' और खुद को 'होशियार', दूसरो को 'अबोध' और अपने को 'बुद्धिमान' समझते हैं।

अशोक राय का भी यही हाल है। जीजी की भानजी के प्रति उसका उत्साह किसी से छिपा न था, उसी भाँजी को चिढाने का उत्साह भी लोग देख ही रहे थे।

फिर भी अशोक कल्पना को 'महेशतला' का नाम लेकर चिढ़ाया करता...मानो महेशतला जंगल हो, वहाँ दिनदहाड़े शेर घूमते हो। महेशतला के निवासी

सिनेमा को आज तक 'टॉकी' कहते हैं और इलेक्ट्रिक को 'बिजली बत्ती' कहते हे। ये सारी खबरें अशोक ने कब जुटाई थीं अशोक ही जाने।

इस वार कल्पना भी उसे दिखा देगी कि महेशतला ऐसा बुरा नही है। वहाँ तरुण प्रतिभा पाई जाती है।

शुरू में भूमिका बॉधती हुई बोली, 'बड़ा महेशतला का मजाक उड़ाया करते है, मैं एक ऐसी चीज दिखाऊँगी कि सब भूल जाएँगे।' उसके बाद पवन का परिचय पेश कर बोली, 'इसी को जन्मजात आर्टिस्ट कहते हैं न अशोकदा ? देखिए उसका काम।'

उस चहचहाती उत्साहदीप्त लडकी की तरफ देखकर हाथ में कॉपी उठाकर उछल-सा पडा, 'वाह भई ! सचमुच इतने छोटे से लड़के का काम है ये ? तुमने उम्र क्या वताई ?'

'तेरह या चौदह का होगा। सुना तो आपने किस घर का लडका है।'

अशोक ने सामने बैठे खुशी-खुशी मुख की ओर देखकर कहा, 'नही, मानना ही पड़ेगा।'

उसके बाद—साधारण चित्र बनाने से कहीं ज्यादा बुद्धि होनी चाहिए, इस विषय पर छोटा-सा एक भाषण देकर, मौजूदा एक-आध मशहूर कार्टुनिस्टो के नाम गिनाए, उन सभी के बनाए कार्टूनों से अज्ञात गॉव के एक किशोर का काम, किसी दशा में कम नहीं। ऐसी उदार राय देकर कॉपी उसने यह कह कर रख ली कि ठीक से देखेगा दोबारा। उसने महेशतला के लड़के की प्रशंसा की।

कल्पना ने पूछा, 'बस देखेगे ? छापेंगे नही ?'

उदार भाव से अशोक बोला, 'क्या तुम्हारे कहने की प्रतीक्षा करूँगा ?'

उसके बाद ?

उसके बाद दिन बीतते गए, अशोक के 'रंग व्यग' ने उन्हीं मशहूर कार्टूनिस्टों के बनाए रेखाचित्र छापते रहे, पवन के चित्रों के बारे में दी गई उदार प्रतिश्रुति का पालन ही नहीं हो रहा था।

कल्पना की प्रत्याशा झूठी सिद्ध हुई। शुरू-शुरू में अशोक को देखते ही कल्पना हल्ला मचाने लगती, 'क्या हुआ अशोकदा ? आपके नामी लोग ही तो जगह हथियाए हुए हैं।'

अशोक ने समझाया, यह सब बहुत पहले का लिया था, इन्ह तो पहले छापना ही पड़ेगा, वरना ये मशहूर लोग नाराज हो जाएँ।'

उसके कुछ दिनों बाद पूछने पर अशोक बोला, 'अब छाँट रहा हूँ।'

इधर कल्पना भी धीरे-धीरे, नए कॉलेज की पढ़ाई, अन्य अनेक सहेलियों का साथ, पवन को भूलती चली गई। रह-रहकर जब वह याद आ जाते तो अशोक को धर दबोचती, 'क्या हुआ अशोकदा ? मैं तो उस लड़के को मुँह न दिखा सकूँगी।'

अशोकदा अपनी जीजी के घर रोज आता है, अतएव रोज मुलाकात होती। उस 'मुलाकात' में जो आवेग रहता, न जाने किस लोक की बातें होतीं, दिल की धड़कन तेज होती, भला ऐसे समय में महेशतला का वह नाचीज रोज-रोज कहाँ से टपकता ?

कभी तो अशोक के जाने के बाद उसका ध्यान आता, 'अरे सोचा था कहूँगी, भूल ही गई।'

क्रमशः एक झंझट और सामने आ गई। कागज के दाम बढ़ गए, छपाई का खर्च देखते हुए अशोक की पत्रिका कलेवर क्षीण-से-क्षीण होकर रह गया।

दूसरी ओर प्रेम की पेगें बढ़ती जा रही थीं।

फिर भी—

एक दिन कल्पना ने उदास होकर कहा, 'ओ अशोकदा, मनु ने तो हर चिट्ठी में अपने दोस्त के लिए पूछ-पूछकर हैरान कर रखा है, मैं क्या उत्तर दूँ ?'

बड़े ही सौजन्यभाव से अशोक बोला, 'साफ-साफ लिखा दो, मैगजीन छपना बन्द हो गई है।'

'यह दशा तो आज है। अभी तक क्या हुआ था ?'

'अरे बाबा, जो जी में आए लिख दो।'

आज कल्पना ने कड़ाई का रास्ता पकड़ा। बोली, 'तब फिर आप मुझे कॉपी लौटा दीजिए। मनु ने भी यही लिखा है।'

अशोक बोला, 'अच्छा भइया, अच्छा। तुम्हारी व्याकुलता देखकर कभी-कभी आशंका होती है कि लड़का मेरा रायवल तो नहीं है।'

'ऐ ! असभ्य कही के।' कहकर कल्पना ने ऐसा मुँह बनाया कि उसके बाद अख्यात महेशतला का उससे भी अधिक अख्यात पवन नामक लड़के की चर्चा छेड़नी सम्भव नहीं रह गई।

इसके बाद बीच-बीच में बात उठती, 'तुम्हारे हाथ जोड़ती हूँ, कॉपी ला दो। उस लड़के को लौटाकर ही चैन पा सकूँगी। दो-ढाई साल तो हो गए।'

'देखूँगा, मिल नहीं रही है, इतने कागज बिखरे पड़े है, कहीं नीचे दब गई है, मिल नहीं रही है।' कहकर टाल जाता अशोक। इसके बाद अशोक ने घोषणा की 'थोड़े दिन और रुक जाओ, खुद जाकर ढूँढूँगा। हिमालय पहाड़ तुम्हारे हाथो से साफ होने की प्रतीक्षा में है।'

'मुझे क्या पडी है तुम्हारा पहाड साफ करने की ?' कहते हुए मनतोष-भगिनि नखरे से बिछ-सी गई।

अन्त में वह दिन भी आ गया जब कल्पना को स्वंय ढूँढ़ने का मौका मिला, लेकिन ढूँढने पर भी कॉपी का कहीं नामोनिशान नहीं मिला।

अब अशोक को याद आ रहा था—वह कॉपी प्रेस मे छोड आया था या फिर किसी व्यंग्य रसिक लेखक को दिया था तस्वीरों के शीर्षक लिखने के लिऐ। कही कॉपी चोरी तो नहीं चली गई ? खो तो नहीं गई ?

'उसे कौन चुराएगा !' कल्पना कहती तो अशोक नाराज हो जाता। यह भी कहने से बाज न आता कि उस अभागे लौडे के कारण कल्पना ने अशोक का जीना हराम कर रखा है। अबतव धीरे-धीरे कल्पना चुप हो गई।

परन्तु इस बीच वह क्या मनु से नहीं मिली थी ? क्यों नहीं ? शादी में तो सभी आए थे पर उस खुशी के मौके पर पवन के व्यगचित्र का ध्यान किसको था ?

इसके अलावा मनतोष के जीवन ने भी मोड़ लिया था। हर साल पास होकर कॉलेज में दाखिला लिया था उसने। मामा के यहाँ न रह कर डेली पैसेन्जरी करता था। पवन से अब मुलाकरत होती थी।

फिर शर्म ने भी ऐसा करने से रोका था। शुरू-शुरू में दोनों मित्रों के बीच थी प्रत्याशा फिर हताशा और आज लज्जा।

माना दोनों लज्जित थे।

जब मनतोष कहता, 'आज ही मै मझली दीदी की खबर लेता हूँ' तब पवन कहता, 'अरे छिः, बड़ी भारी तो चीज है.. उसे देखकर मामीजी के भाई ने मजाक उड़ाया होगा. ..मझली दीदी का पागलपन था।'

क्रमशः मनतोष पवन का सामना करने से कतराने लगा, कही पवन कॉपी की बात नहीं छेड़ दे। इधर पवन डरता कि कहीं मनतोष यह न सोचे कि पवन कॉपी मॉगने आया है।

अतएव धीरे-धीरे दूर होते चले गए दोनों। और फिर—

और फिर अब तो मनतोष रोज कलकत्ता जाता है पढने। वह देखता है पवन का बाप कितने भद्दे ढंग से मसालेदार लाई-चना बेचा करता है। इस आदमी के लड़के के साथ कभी उसकी इतनी दोस्ती थी सोचकर शर्म से गर्दन झुक जाती।

नया-नया कॉलेज का जीवन, दोस्तो के चक्कर में पड़कर 'राजनीति' भी सीख ली, 'साम्य' पर बोलना भी आ गया, फिर भी मनतोष के मन के किसी कोने मे कॉटा-सा चुभा करता था।

जबकि तब तक एक सरल विश्वासी मन आशा के सपनों को पालता चला जा रहा था।

सपना देखता—

छोटा-सा एक पत्र पवन के पते पर आया है—'भाई पवन जब से तुम्हारी कॉपी ले आई हूँ बड़ी शर्मिन्दा हूँ। पता नहीं तुम क्या सोच रहे हो। जल्द ही तुम्हारी तस्वीर...इत्यादि।' अथवा 'प्रिय पवन, बड़े दुःख के साथ लिखा रही हूँ, तुम्हारे बनाए चित्र मामीजी के भाई को पसन्द न आने के कारण...'

या फिर—'पवन, तुम्हारे चित्र छपवा न सकने के कारण कॉपी वापस लौटा रही हूँ।'

पार्सल से वापस नहीं आ सकती है ?

रह-रह कर पवन का गला अभिमान बन्द होने लगता। मामूली दो लाइन लिखने में हर्ज था क्या ? पवन तो तकादा भी नहीं कर रहा है ? गुस्से भी नहीं हो रहा है। फिर ?

तुम एक चीज ले गई, क्या तुम्हारी कोई जिम्मेदारी नहीं बनती है ?

क्षोभ-दुःख और अपमान से जरजर होता रहा पवन नामक वह लड़का।

कभी-कभी उसे आश्चर्य होता।

सोचा, वही देवकन्या-सी मँझली दीदी।

तुच्छ एक कॉपी जाती है तो जाए, इतने दिनो से तुम्हारी जिस मूर्ति को पवन पूजता आया है, वही मूर्ति नष्ट हो गई ? पवन को यही दुःख उदास कर देता।

आशा की अन्तिम कडी भी टूटने लगी।

रजनी अपने काम म कितना भी व्यस्त क्यो न रहे, लड़के की उदासी उससे छिपी नही। देख तो छवीरानी भी रही थी पर उसका स्वभाव नहीं है झट कुछ कह बैठने का—वह चुप थी। रजनी ही कहता, 'बेटे की उम्र शादी की हुई फिर भी उसका मन तो उड रहा है छवीरानी—लडका तो तुम्हारा हमेशा से ऐसा है, कोई नई बात तो है नही।'

'अरे बाबा, सॉप की छीक सपेरा पहचानता है। उसमें और इसमें फर्क है। तब हर समय नाराज रहता था, हर चीज नापसन्द थी और इस समय तो लुटा-लुटा-सा चेहरा लिये फिर रहा है।'

छवीरानी भी लडके पर तीक्ष्ण दृष्टि रख रही थी। यहाँ तक कि इससे-उससे पूछकर उसकी गतिविधि का भी पता करती थी फिर भी पति के आगे झुकी नही। बोली, 'तुम भी अब जात्रा में गाए जाने वाले गाने लिखो जब तुम्हारा दिमाग इतना भागने लगा है। लड़के की उम्र हुई है, कोई काम-काज है नहीं, मन क्या खाक लगेगा ? तुम्हारे बड़े भाई का बेटा तो इतनी सी उम्र से मछली पकड रहा है, धान ढो रहा है, बाबू लोगों के घर जाकर काम करता है, तुम्हारा लड़का कर रहा है ये सब ? बाबू लोगो की तरह स्कूल में पढना चाहता था, तुमने वहॉ भी नहीं पढाया। अब लडके में नुक्स निकलने से कैसे काम चलेगा ? जेठजी का मँझला लड़का तो बनियान बनाने वाले कारखाने मे काम करने चला गया है। जीजी तो उसके लिए लड़की ढूँढ रही हैं।'

रजनी बक्स की चेन को कधे पर ठीक से जमाते हुए बोला, 'तो तू भी अपने लड़के को भेज दे न मोजा-गंजी बनाने वाले कारखाने में।'

भौहें सिकोड़कर छबीरानी बोली, 'हॉ, हर काम तो मै ही किया करती हूँ न ?' कहने को पहले की तरह कह गई पर भावहीन था वह कहना।

छबीरानी का मन उदास था।

जब घर पर अकेली होती, अपने मन में सोचा करती, 'एक ही बेटा होने के कारण इतना दुःख है। और पॉच बच्चे होते तो घर का यह हाल न होता।' कभी-कभी कहती, 'पढ़ने डाल ही दिया होता लौडे को, न हो बाबू बन जाता। तब तो—बाबू लोगों के लड़को के साथ उठने-बैठने से दिमाग बिगड जाएगा। और अब ? है उस का मिजाज ठिकाने ?

परन्तु छबीरानी बड़ी होशियार हैं। कहीं सॉप न निकल आए, इसी डर से केचुए का बिल तक नहीं छूती है। ये बातें अपनी जुबान पर नही लाती है।

उधर पवन को मालुम हुआ परितोष मास्टर के यहाँ धूमधाम है, नया दामाद आ रहा है, पहली बार लड़की-दामाद आ रहे है। मतलब वही चश्मा पहनने वाली मझली दीदी आई हैं। महेशतला। अच्छा, पवन अगर धडधड़ाता हुआ जब उनके सामने जा पहुँचे और पूछे 'क्यों मॅझली दीदी, उस कॉपी का क्या किया आपने ?'

तब देखेगा पवन कि अमीर बाप की बेटी क्या जवाब देती है।

पवन को क्या पता कि वह लड़की शर्म से गड़ी जा रही है, बाहर नही निकल पा रही है—इसी एक बात की शर्म।

इसी समय महेशतला मे समारोह की तैयारी होने लगी। पता चला महेशतला हाईस्कूल के पचास साल पूरे हुए है, सात दिन तक उत्सव चलेगा, सांस्कृतिक कार्यक्रम होंगे, जिला मजिस्ट्रेट अतिथि बनकर आ रहे है, सभापति बनकर आ रहे हैं कोई मंत्री जी।

कलकत्ते से प्रसिद्ध-प्रसिद्ध आर्टिस्ट आएँगे गाना गाने। स्थानीय तरुण सघ को भी एक दिन नाटक करने का मौका दिया जाएगा और भी जाने क्या-क्या होगा।

स्टेज डेकोरेशन का काम इसी तरुण संघ ने ही संभाला है। हो सकता है इसी शर्त पर उन्हें एक दिन नाटक प्रस्तुत करने की अनुमति मिली है।

तरुण सघ के ही एक लड़के ने बातचीत के दौरान यह प्रस्ताव रखा, 'अच्छा पवन से क्यों न कुछ काम लिया जाए ? वह इस काम में तो कुशल है।'

सचमुच ही पवन इस काम में निपुण था। उसके अन्दर सूबोध और हाथो मे कला है। यह बात वे लोग जान चुके थे, इस बार सरस्वती पूजा के उपलक्ष मे। लाइब्रेरी से इधर बहुत दिनों से पवन जुड़-सा गया है।

एक बार जाकर उसने सदस्य बनने की इच्छा प्रकट की थी। सुनकर लडकों ने पूछा था, 'तू सदस्य बनेगा ? ऐसी किताबे पढ़ सकेगा ?'

बादल के प्रश्न मे निहित विस्मय और अविश्वास के स्वरो को पवन पहचान गया था, उसका गोरा चेहरा शर्म से लाल हो गया। उसने सहसा सीना तान कर कहा था, 'मै नहीं, मेरी मॉ पढेगी।'

पवन नहीं, पवन की मॉ पढ़ेगी ?

यह तो और भी आश्चर्य की बात है।

उन्होंने पूरी तरह से अविश्वास प्रकट किया था, 'तेरी मॉ पढ़ेगी ?'

'क्यों नहीं पढ़ेगी ? घर पर रामायण, महाभारत, चंडी कथा जो कुछ था पढ चुकी हैं। अब हमारे घर में किताब नहीं है।'

अतएव पवन लाइब्रेरी का सदस्य बन गया था। किताब लेते समय हस्ताक्षर किए जब उसने तब तो सभी उसकी लिखावट पर मुग्ध हो गए।

बचपन से पवन ने लिखना नहीं, अक्षरों को भी विचित्र करना सीखा था, इसीलिए उसके अक्षर छपे से लगते थे। बाद में लड़कों को पता चल गया था, पाठक स्वयं पवन है।

वे कहते, 'तू सचमुच बहादुर है। स्कूल गए बगैर ही इतना कुछ सीख लिया है तू ने...'

धीरे-धीरे लाइब्रेरी का सारा काम उसके जिम्मे आ गया—किताबे झाडना, सफाई, किताबो की, जिल्द, फिर नम्बर लगाकर यथास्थान रखना...यहॉ तक कि पवन सदस्यों को किताबें भी देकर रजिस्टर पर चढ़वा लेता।

सरस्वती पूजा के अवसर पर उसने 'सोले के फूल' बनाकर स्वेच्छा से उपहार दिए और मंच-सज्जाक की। देखकर लोग दंग रह गए। आज वादल को उसका ध्यान आया और पवन के आगे उसने प्रस्ताव भी पेश कर दिया।

''तुझे' 'सोले' का खर्च वगैरह दिया जाएगा...'

पवन बोला, 'खर्च की बात नहीं है, मैं तो शौकिया ही न जाने कितना सोला खरीदता हूँ, मॉ पैसे देती है। मैं केवल चाहता हूँ, अपन इच्छानुसार सजावट करूँ।'

अरे, वह तो करेगा ही। पर खर्च का पैसा नहीं लेगा ?'

'मैं गरीब हूँ इसीलिए कह रहे हो बादलदा ? ठीक है, देना ही अगर चाहते हैं तो एक निमन्त्रण-पत्र दे दीजिएगा। हर रोज जाया जा सके ऐसा एक कार्ड।'

वे लोग तुरन्त मान गए।

पवन इस काम को पाकर दूने उत्साह से जुट गया। उसके मन का समस्त अवसाद कपूर की तरह उड़ गया। जी-जान से वह सोला के फूल, केरी और भी अनेक आकार के डिजाइने बनाने लगा।

इस सभी के नीचे उसने बहुत बारीकी से अपना नाम अंकित कर दिया। वह सपने देखने लगा इसी बहाने उसका परिचय प्रसिद्धि प्राप्त कर ले शायद।

उधर पोस्टर छप गए थे। दीवारों पर चिपका भी दिए गए थे—आर्टिस्टों के नाम, कार्यक्रम सूची, सभापति और मुख्य अतिथि के नाम भी।

मुख्य अतिथि का नाम देखकर पवन चौंक पड़ा। उसके सीने पर जैसे किसी ने हथौड़े से चोट पहुँचाई। ये जिला मजिस्ट्रेट हैं न ?

पवन धड़कते दिल से माँ-बाप के सामने जा उपस्थित हुआ।

'पिताजी, देखा तुमने ? जिला मजिसट्रेट का नाम है के॰ के॰ सामन्त। माने कृष्ण कुमार सामन्त।'

पवन बड़ा उत्तेजित दिखाई दिया।

रजनी बेटे की इस उत्तेजना का कारण न समझ सका। बोला, 'तो क्या हुआ ? वह क्या तेरा अपना आदमी है ?'

क्या हुआ ? अरे देख नहीं रहे हो एक सामन्त भी यह सब बन सकता है।'

अब रजनी की समझ में बात आई।

उदास भाव से बोला, 'बन क्यों नही सकता है। वह तो हमारा रिश्तेदार भी हो सकता है। असल में जाति कोई चीज नहीं है बेटा। मैं तुझे बता दूँ दुनिया में बस दो ही जातियाँ है—बड़े आदमी और गरीब आदमी...इससे आगे और कुछ नहीं।'

रजनी दृढ़तापूर्वक बोला, 'तेरी अक्ल देखकर आज पछताता हूँ बेटा, लेकिन अब कुछ हो नहीं सकता है। अगर देखता कि तेरा कुछ...'

'तेरा कुछ क्या' यह रजनी ने नहीं कहा। पवन का हृदय तूफान में लोटते पेड की तरह छटपटाता रहा। अब कुछ नहीं हो सकता है, पवन का कुछ नहीं हो सकता है। इसके अर्थ हुए पवन का न तो भविष्य है न भूत।

इससे पहले रजनी अनेकों उदाहरण प्रस्तुत करता है। बाबू लोगों के निकम्मे बेटो के किस्से सुनाता था पर आज उसने कुछ नहीं कहा। लगा, आज वह स्वय दुखी है। शायद बेटे के हताश चेहरे को देखकर।

पर क्या केवल रजनी ही ?

पवन के विरुद्ध क्या दुनिया षड्यन्त्र नही रच रही थी ? जी-जान से मेहनत करने के एवज में उसने सिर्फ एक कार्ड ही तो मांगा था—वह कार्ड तक उसे नहीं मिला।

बादल से तो कुछ कहते ही नही बना, पार्टी के नेता तारापदो बडी मुलायमियत से बोला, 'एक मुश्किल आ पडी है पवन। मालिक लोग तरुण संघ को इतने कम कार्ड देंगे यह हमने सोचा तक नही था। अब देख रहा हूं पूरा नही पड़ रहा है।'

पवन की ऑखो के आगे एक काला पर्दा झूल गया। किसी तरह से फटी-फटी आवाज मे बोला, 'इसके मतलब मेरे लिए कार्ड नहीं हैं ?'

तारापदो बड़ा चतुर लडका था। अपने कण्ठस्वर को और भी मधुर बनाकर बोला, 'सिर्फ तुम्हारा ही क्यों भाई, हममे से बहुतों के नहीं हैं। बहुत बुरा लग रहा है पर...'

पवन ने यह नहीं जानना चाहा कि आप में से और किस-किस को नही मिला है। उसने यह भी कहीं कहा कि मै तो पहले से ही जानता था। वह सिर्फ बोला, 'ठीक है।'

तारापदो से बोला, 'तुम इसका बुरा मत मानना भाई, चले आना, हम तुन्हे किसी तरह घुसा लेंगे। ग्रीनरूम का जरूरी आदती है कहकर गया फिर पर्दे के पीछे से ..'

बचपन में पवन कार्टून बनाता था।

पवन व्यंग्यात्मक हँसी हॅसना जानता है।

उसी हॅसी की झलक दिखाकर बोला, 'जरूरी आदमी माने घर झाड़ने-पोछने वाला नौकर...तारापदा दो ?'

तारापदो का चेहरा गम्भीर हो गया।

बोला, 'तुझे अपने मजाक का पात्र समझ रहे हो तो गलती कर रहे हो पवन।'

वहाँ से तारापदो चला गया। उसने तरुण संघ के समस्त सदस्यों को जाकर सावधान कर दिया कि 'किसी भी कीमत पर बदमाश पवन को लिफ्ट मत देना। बड़ा घमण्डी हो गया है साला। उसके काम की जरा की तारीफ क्या कर दी गई है कि दुम फूल गई है साला। नीच जाति को सिर चढ़ाना इसीलिए ठीक नहीं होता है।'

इस सच्चाई को तरुण संघ ने तुरन्त आत्मसात कर लिया, परन्तु तारीफ करने वालों को रोक कहाँ सके ? किसने मंच पर यह चित्रकारी की है ? किसने सोला के फूल बनाए हैं ? शिल्पकार का नाम कहाँ हैं ? कहाँ से आया है ? तरह-तरह के प्रश्न।

जवाब मौजूद ही था। रात-दिन मेहनत करके तरुण संघ के लड़कों ने बनाया था। रात-भर सजावट की थी। एक शिल्पकार तो था नहीं—अनेकों शिल्पकार लगे थे।

वह तारीफ पवन के कानों में पहुँची। उसकी माँ ने सुना। छवीरानी आश्चर्य से पूछती, 'ये पवन, तूने जान डालकर सारा काम किया और तारीफ लूट रहे हैं तेरी लाइब्रेरी के वह लड़के ?'

पवन उत्तर न देकर रूखा-सा एक प्रश्न पूछ बैठा, 'लाइब्रेरी मेरी है ? मैं होता कौन हूँ ? मुझसे उसका क्या सम्बन्ध है ?'

'लो, और सुना। तू वहाँ जाता नहीं है ?' अवाक् हुई छवीरानी, 'रात देर तक रुका नहीं है ?'

पवन और भी रूढ़ हुआ, 'रुकता हूँ। उनकी किताबें सजाता हूँ, आलमारी की धूल झाड़ता हूँ।'

छवीरानी चुप हो गई।

सात दिन चलकर उत्सव समाप्त हुआ। सभी खुश थे।

मन्त्री ने अपने भाषण में महेशतला हाई स्कूल की उन्नति के लिए मोटी रकम सरकार से ग्रान्ट दिलाने की बात कही। जिला मजिस्ट्रेट ने भी स्कूल के अनुशासन, सांस्कृतिक रुचि-बोध की तरफ की।

कुछ दिनो बाद पवन बोला, 'पिताजी मै एक बार रामपुर हाट हो ही आऊँ—दादा कितनी बार बुला चुके है।'

और जा भी कहाँ सकता है पवन ? इस महेशतला से भागने की ओर कौन-सी जगह जानता है वह ? अनजानी सौतेली बुआ क्या यहाँ के लोगों से भी ज्यादा निष्ठुर होगी ? पवन का मन महेशतला के हर इन्सान के विरुद्ध हो गया था।

लेकिन ठीक अभी पिता जी ने ये कौन-सा झंझट खड़ा कर लिया ? वह कहने लगे, 'अरे ! आज मुझे सुधि आई ? इधर मैं तो तेरी नौकरी तय किए बेठा हूँ।'

'नौकरी ?' पवन आसमान से गिरा।

फिर गभीर होकर बोला, 'किसी अमीर के घर गाय चराने वाला भाग गया है क्या ?'

'गाय चराने वाला ?' रजनी अवाक्। हतप्रभ-सा होकर बोला, 'मै तुझे गाय चराने वाले की नौकारी पर लगवाऊँगा ?'

'इससे अच्छी नौकरी मुझे मिलेगी कहाँ ?' निर्लिप्त भाव से पवन बोला।

अब रजनी का चेहरा प्रसन्न हुआ। बोला, 'अरे बाबा, तू क्या समझता है तेरे बाप के साथ अच्छे लोगों का काम नहीं पड़ता है ? जगन्नाथ बाबू के गोदाम मे रजिस्टर भरने का काम है। तेरे हाथ की लिखाई मोती जैसी है, इसलिए चाहता है। कह रहा था, 'साला अभी जो है न, उसके हाथ की लिखाई देखकर तो भगवान भी पांव फैलाकर रोने बैठ जाएगा। जगन्ननाथ के चौदह पुरखे वह लिखाई पढ नहीं सकते हैं। वह जो समझाता है वही समझाना पड़ता है। परसो दिन अच्छा है, मैं यह कह आया हूँ, उसी दिन तू 'ज्वाइन' करेगा।'

पवन के होंठो पर अद्भुत एक हँसी की झलक उठी। जगन्नाथ शाह ! उसी भैस के अधीन काम करना पड़ेगा ?

धीरे से पूछा, 'तनख्वाह देगा या बेगार ?' मुझे समझता क्या है रे ? मै तुझे जगन्नाथ के गोदाम में बेगार करने दे सकता हूँ ?' मै क्या उसका कर्जदार हूँ ? पाई-पाई देकर सामान खरीदता हूँ। तेरा बाप नकद पर कारोबार करता है बेटा, उधार खाते हैं बाबू लोग।....तनख्वाह अच्छी ही देगा। कह रहा था जो

आदमी था उसे साठ रुपय देता था, पर आदमी बूढा और बेकार था। तुझे पाकर वह धन्य हो जाएगा यही सोचकर तुझे पचहत्तर रुपये देने को तैयार है। बोला, तेरा लड़का है, मुझे कुछ कहना नहीं है।'

रजनी गर्व से ह ँसा। बोला, 'हालाँकि स्वाधीन व्यवसाय के आगे तुम्हारी ये तन्ख्वाह कुछ नहीं। मामूली लाई चने में मैं रोज चार-पाँच रुपये फायदे के कमा लेता हूँ। खैर, भगवान का नाम लेकर परसों से लग जा।'

छवीरानी को पहले से पता था, पर अभी तक कुछ बोली न थी। अब बोली। बेटे के आगे अपने मन की बात कही उसने। पहले महीने की तनख्वाह से वह गाँव के मदिरों में पूजा चढ़ाएगी, घर मे रखी काली देवी की तस्वीर के आगे मिठाई चढ़ाएगी और दादाजी को मनीआर्डर द्वारा पाँच रुपये भेज देगी। कुछ हो, पोते की पहली कमाई। फिर छवीरानी हँसते हुए बोली, 'साल-डेढ साल तुम्हारे रुपये जमा करूँगी, फिर इन्हीं रुपयों को तुम्हारी शादी पर खर्च करूँगी।'

पवन बोला, 'तुम शादी की बात भी सोच रही हो ?

छवीरानी वीरागनाभाव से बोली, 'क्यो नहीं सोचूँगी ? मेरा एक ही लड़का है, शादी नहीं करूँगी क्या ? वंश चलाना है न ?'

पवन लापरवाही से बोला, 'बड़ा भारी राजा-महराजाओं का वंश है जिसका चलना जरूरी है।'

सुनकर छवीरानी खूब नाराज हुई।

उसका कहना था अपने घर मे सभी राजा होते है। इस तरह बात करने की जरूरत क्या है ?

निश्चित दिन पर माँ के हाथ का साबुन से धुला कुर्ता-धोती पहन, देवी-देवताओं को प्रणाम कर पवन रवाना हुआ। पिता को खूब सवेरे प्रणाम कर चुका था।

जिस समय पवन जगन्नाथ के रथ की रस्सी खींचने जा रहा था, उसी समय कल्पना महेशतला से कलकत्ता लौट रही थी। इस बार ज्यादा दिन रही थी। वही स्कूल के फंक्शन के समय से यहीं थी। क्योंकि इस बीच वह लड़की से 'माँ' बन गई थी।

अशोक लेने आया था।

कार पर, खुद चलाकर।

शीतलातला पार कर गोविन्द मंदिर के पास से जाते वक्त एकाएक कल्पना अपने पति से बोल उठी, 'रुको जरा .. रुको न।'

अशोक अवाक्।

'मामला क्या है ?'

'क्या कह रही थी झटपट बोलो। क्या, किसी मंदिर के आगे माथा टेकना है ?'

'नहीं माने...अच्छा रहने दो।'

अशोक बोला, 'बात क्या थी ?'

गोद में बच्चे को सँभालती हुई कल्पना बोली, 'वही लड़का। माने पवन।

'प...वन ! अर्थात् ? पवन नन्दन तो नहीं ?'

'अरे वही, जिसकी कॉपी हमसे खो गई है।'

'हम' ही कहती है वह।

अशोक भौंहे सिकोड़कर कार स्टार्ट करते हुए बोला, 'तुम्हे किसी अच्छे साइको-एनालिस्ट को दिखाना पड़ेगा, मुझे ऐसा लग रहा है। एक सड़ी-गली कॉपी आज भी तुम्हारे मन मे आसन जमाए बैठी है।'

गाड़ी की स्पीड बढ़ाते हुए बोला, 'लौंडा इतना गया-गुजरा न होता तो शायद शक कर बैठता। वही लाई-चने वाले का लड़का है न ?'

कल्पना चुप हो गई।

पवन को पता ही नहीं चला कि उसने क्या खो दिया।

कल्पना कहती भी क्या गाडी रोककर ? शायद कहती, 'पवन, भाई शर्म से तुम्हें मैं मुँह दिखा नहीं पाती हूँ...'

बस इतना ही। इससे ज्यादा नकचढ़े पति के सामने कह भी कहाँ पाती ? भाई भी न कह पाती शायद...बाद में पति व्यंग करता। ठीक ही हुआ, कार रोकी नहीं।

कल्पना को क्या पता, उसका इतना कहना एक आहत अभिमानी हृदय में खोया हुआ विश्वास लौटा देता।

प्रेम-विवाह करने पर भी कल्पना को हर समय कचोटा करता कि स्त्रियाँ कितनी पराधीन हैं। जबकि हर कोई कहता है कि कल्पना राजरानी बन गई है।

जगन्नाथ शाह देखते ही बोल उठा अरे यह तो रजनी का लडका है

पवन ने सिर हिलाया

जगन्नाथ जैसा पहाड़-सा बैठा था, वैसे ही बैठे-बैटे बोला, 'अरे, उस सौंफ से सूखे रजनी को ऐसा चाद का बेटा कैसे हुआ ? नाम क्या है ? लालटू ?'

पवन के तन-वदन मे आग लग गई फिर भी शान्त भाव से बोला, 'पवन। पवन सामन्त।'

कुर्ते से बाहर खम्भे जैसा निकला काला हाथ जाँघ पर मारकर जगन्नाथ बोला, 'इसमे कहने की क्या बात है ? सामन्त का बेटा क्या मुखर्जी होगा ? खैर, बाप ने बताया है न कि क्या काम है ? या कि बस भेज दिया है ?'

पवन को फिर गुस्सा आ गया। सोचने लगा क्या वह इस भैंस के पास काम कर सकेगा ?

फिर भी दाँत पीसते हुए बोला, 'कहा है। रजिस्टर भरना होगा।'

'हूँ ! आ तो देखूँ तेरी लिखाई कैसी है ?' कहते हुए आवाज लगाई उसने, 'विपिन, एक कागज और स्याही-कलम दे तो जा.. दस्तखत करवा कर देखूँ।'

कागज-कलम आ गया। पवन ने अपना नाम न लिखकर लिखा 'श्री श्री दुर्गा सहाय'।

देखकर भैंस अपनी प्रसन्नता को छिपा न सका। खुश होकर बोला, 'जीते रहो बाप। इतना काफी है। मुझे यही तो चाहिए।'

पवन की नौकरी लग गई।

'बड़ी अच्छी लिखाई है रे तेरी', जगन्नाथ कहता, 'जैसे मोती बिखेर दिए हैं। अगर तू मेरा एक काम और कर सके तो मैं तुझे पूरे के पूरे सौ रुपये ही दूँगा।'

पवन ने कुछ कहा नहीं, केवल आश्चर्य से देखा। यह आदमी प्रसन्नता प्रकट करना जानता है ? पवन के जलते हृदय पर जरा-सा पानी का छींटा पड़ा।

स्वीकृति ऐसी ही चीज होती है।

उस सदा से अवज्ञा की वस्तु भैंसे के मुख से अपनी तारीफ सुनकर पवन को अच्छा लगा।

जगन्नाथ बोला, 'बताऊँगा, बाद में बताऊँगा। दुकान पर बैठकर बताना ठीक नहीं होगा, घर ले जाऊँगा।'

दुकान पर बताना ठीक नही होगा ?

पवन का मन फिर विद्रोही हो उठा। किसी तरह का गैरकानूनी काम तो नही ? ऐसे लोग काला धंधा भी करते है। पर पवन सख्ती से बोला, 'किसी तरह का गलत काम तो नही है ?'

जगन्नाथ ने अपनी काली आँखें ऊपर उठाई। पवन का चेहरा निहारा, उसके बाद दबी आवाज मे बोला, 'अगर हो तो नही करेगा ?'

पवन ने कहा, 'क्यो करूँ ?'

'अगर और भी ज्यादा रुपया दूँ ?'

पवन गुस्से से बोला, 'हजारों रुपये देने पर भी नही।'

सुनकर जगन्नाथ अपने विशाल शरीर को खींचता हुआ गम्भीर स्वरो मे बोला, 'याद रहेगा न ? नही, तुझसे मै कोई गलत काम नही करवाऊँगा, तू निश्चिन्त होकर काम कर।'

कुछ दिनो तक पवन गद्दी पर ही काम करता रहा। माल-असबाब खरीदने-बेचने का हिसाब, उधर-बाकी का हिसाब...कुछ कम न था। फिर भी कुछ निश्चिन्त था, कुछ नहीं।

जगन्नाथ दूसरा क्या काम कराएगा, सोच-सोचकर परेशान था।

बाद में उसे पता चला, क्या काम है। सुनकर ताज्जुब मे आ गया। दुनिया मे कितनी असम्भव घटनाएँ घटित होती है। पवन जानता है, पर ऐसी घटना घट सकती है उसने कभी सोचा तक नहीं था। लेकिन क्या केवल पवन ही ? जो सुनेगा उसे ही क्या आश्चर्य नहीं होगा ? पवन किसी को बताए तो क्या वह विश्वास करेगा ?

फिर भी ऐसी ही घटना घटी।

काम में लगने के कुछ दिनो बाद—

उस दिन बृहस्पतिवार था, दुकाने बन्द थीं। सारा महेशतला ही बन्द था। इस दिन दुकान जाना नहीं पडता है, पर पहले दिन जगन्नाथ ने कह दिया था, 'कल फिर मेरे घर आना। जिस वक्त दुकान पर आता है उसी वक्त पर आना।'

पवन समझ गया, आज वह बात पता चलेगी। मन ठीक न था, फिर भी कह दिया था, 'अच्छा।' जब जाना ही है तब विरोध करने से फायदा ? सुबह माँ ने पूछा, 'आज छुट्टी के दिन पवन कहाँ जाने को तैयार है ?'

दोना हाथ उलटते हुए उसने कहा था, 'पता नही।'

पवन को मालूम था कि जगन्नाथ के कोई बेटा नहीं है। दो बेटियाँ हैं, ससुराल मे रहती है। रहने को एक भतीजा हैं वही गुणो की खान जगन्नाथ की इस सम्पति का उत्तराधिकारी होगा, यह बात कोई और जाने या न जाने, भतीजा पचा अच्छी तरह जानता है।

पर पंचा या उसके माँ-बाप जगन्नाथ के घर पर नहीं रहते हैं। उनका अलग घर है। जगन्नाथ ने पिता के घर से हटकर अपना अलग शौकीन किस्म का मकान बनाया है।

पवन ने इससे पहले कभी जगन्नाथ के घर का भीतरी हिस्सा नही देखा था। देखकर आश्चर्यचकित रह गया—ऐसे आदमी की इतनी सुन्दर रुचि ? या कि जगन्नाथ गृहिणी का शौक है ? या किसी और की ? अथवा मिस्त्री ने ही ऐसा बनाया है ?

घर मे और कौन-कौन है पवन को पता नही था। अब पता चला कि जगन्नाथ की पत्नी है पर वह भी पगली-सी। माने उन्हे दुनिया की हर चीज अपवित्र दिखाई पड़ती है। सारे दिन वह गोबरजल, गंगाजल की मदद से सभी कुछ पवित्र करती रहती है।

घर के बाहर ही जगन्नाथ ने पवन को सावधान कर दिया, जूता आँगन के बाहर बेडे के बगल में रखकर आए।

रजनी स्वयं रबर की चप्पल पहनता है पर बेटे को वह अच्छी चप्पल ही खरीद देता है। इस प्रस्ताव पर पवन डरकर बोला, 'कही कुत्ता न उठा ले जाए ?'

'नहीं, नहीं।' जगन्नाथ बोला, 'इस घर मे कुत्ता नहीं आता है। क्यों आएगा ? गोबर जब से शुद्ध होने ? असल मे, दूर से कुत्ता देखकर इस घर की मालकिन ढेला फेका करती हैं।

पवन का चेहरा फक पड़ गया, 'क्या गोबरजल पीना पड़ेगा ?'

'हैं ? क्या कह रहा है ?' जगन्ननाथ हा हा हा हा हँसकर बोला, 'तू तो अच्छा डरपोक है।'

एकाएक भीतर कहीं से एक खनकती-सी आवाज आई, 'ऐसी पागलों-सी हँसी कौन हँस रहा है ?'

जगन्नाथ ऊँची आवाज में बोला, 'तुम्हारा यम।'

फिर पवन से बोला, 'आ।' बाहर की तरफ के एक कमरे में ले गया उसे। भीतर से कमरे को ठीक से बन्द कर दिया।

पवन का दिल धड़क उठा। क्यों रे बाबा ! मार डालने का इरादा है, क्या ?

पर मुँह से कुछ नहीं बोला।

मुसकुरा कर जगन्नाथ बोला, 'डर रहा है क्या ? डरना ठीक भी है। डरने की बात ही है।'

कहकर दीवाल की अलमारी के पल्ले खोल उसमें से कागजों का अम्बार खीच कर निकालना शुरू किया। बहुत दिनों का पुराना पीला हो गया कागज, उसमे से कुछ साफ भी थे। फुलसकेप कागज-जिनके कोने डोरे से बँधे थे।

निकाल कर गड्डियॉ बना-बनाकर जगन्नाथ ने तख्त पर रखे। गॉव मे गृहस्थो के घरो में मेज-कुर्सी, सोफा तो रहते नहीं हैं, यही बडे-मझले साइज के तख्त रहते है।

जगन्नाथ तख्त पर कागजों का ढेर सजाकर, धोती से खूँट के झाड़ते हुए बोला, 'बात क्या है जानता है ?...माने...मामला कुछ भी नहीं है, समझ ले। असल मे यह जगन्नाथ शाह का पागलपन है। बचपन है। बचपन से यही एक नशा था, जात्रा लिखने का...नाटक कहा जा सकता है। पर माँ सरस्वती ने ऐसी लिखाई दी है कि छापेखाने वाले पाठोद्धार न कर सकेंगे। छापना तो दूर। इधर पड़े-पड़े कागज भी पीले पड़े जा रहे हैं, दीमक रलग रही है। इसीलिए सोचा है किसी से लिखवा कर छपवाऊँगा।' कहकर एक शर्माई-सी सन्तोषभरी हँसी हँसा वह। जैसे उसने जो सोचा है वह हो ही गया है।

पर इस गड्डर के ढेर को देखकर भीतर-ही-भीतर पवन के पसीना छूट गया। हाय, यह लिखाई है ? लग रहा है चूहे की दुम में स्याही लगाकर कागज पर दौड़ने की अनुमति दे दी गई थी उसे। पवन ने धीरे से कागज का एक कोना उठाते हुए पूछा, 'किसी विषय पर लिखा है ?'

जगन्नाथ अपनी खुशी में मगन था, पवन का उतरा चेहरा, भरी-सी आवाज पर उसका ध्यान ही नहीं गया। मुस्कुराकर बोला, 'एक ही विषय है क्या ?

कितने इ। पौराणिक है, ऐतिहासिक है...माने तू छोटा है, तुझसे क्या कहूँ....फिर भी ...वह रोमांटिक हैं। जैसे 'उषा ओ अनिरुद्ध' एव 'पृथ्वीराज संयुक्ता'। अच्छा. पहले कोई एक शुरू तो कर।'

जगन्नाथ ने सब से ज्यादा गला-सड़ा कागज का गट्ठर नीचे से निकालते हुए कहा, 'ये हैं' कपट जुआ ओर युधिष्ठिर का मतिभ्रम। बड़ा जबरदस्त है, पर मेरी लिखाई ने ही सब चौपट कर रखा है। इसे दीमक भी चट करना चाहती है।'

पवन को लगा दीमक उसे भी चट कर रही है, अब वह यहां से हिल तक न सकेगा। पवन ने फिर भी साहस संजोते हुए कहा, पर मै भी तो लिखाई ठीक से....'

जगन्नाथ ठहाका मारकर हँसने लगा, पवन के चिर-परिचित जगन्नाथ शाह के भीतर से मानो एक दूसरा इन्सान सामने आ गया हो। जगन्नाथ बोला, 'ठीक से ? अरे मुझे तो शक है कि तू इसका एक भी अक्षर पढ़ सकेगा। तू तो तू, तेरा बाप तक नहीं। मै पढूँगा तू सिर्फ लिखेगा।'

'आप पढ़ेगे ?'

'हॉ रे बाबा। मै कोई वेदव्यास की तरह तो बोलूँगा नहीं कि तू गणेश जी की तरह लिख लेगा। में धीरे-धीरे पढूँगा तू भी धीरे-धीरे लिखना।'

पवन का दिल अब जाकर हल्का हुआ।

पवन को लगा जगन्नाथ शाह उसी के दल का एक आदमी है। पवन भी तो कुछ करना चाहता है। लिखना, चित्रकारी, कविता, गाना...पवन के मन मे न जाने क्या-क्या भरा है। और इसीलिए तो वह बनाता है 'सोला' के फूल, मिट्टी के देवी-देवता बाँस की नाव। टूटी-फूटी मिट्टी की हॉडी ले आता है कुम्हार के यहाँ से, उन्हे रगता है।

रग भी वह स्वयं बनाता हे। सिन्दूर, पेड़ो की छाल, प त्तें से वह रग बनाता है।

पर किस काम आती है पवन की शिल्पकला ? घर पर ही तो पड़ा है सब कुछ। एक बार स्कूल फंक्शन मे कर के उसने सबको पहचान लिया है।

आश्चर्य, वही जगन्नाथ शाह इतना दबंग होते हुए भी इस क्षेत्र मे पवन जैसा ही असहाय, बेचारा और व्यर्थ है। अतएव पवन का जोड़ीदार तो हुआ ही।

पवन ने अब उत्साह प्रकट करते हुए पूछा, 'अभी शुरू कर दूँ ?'

जगन्नाथ बोला, 'पहले मैंने भी यही सोचा था, लेकिन अब सोचता हूँ रहने दूँ। सुना है गुरुवार को कोई शुभ काम शुरू करने के लिए गुरु का निषेध है। शुक्रवार ही ठीक रहेगा। मैं मौका देखकर तुझे दुकान से निकाल लाऊँगा। कुछ ब्लाटिंग पेपर खरीदना पड़ेगा, कागज तो है।' कहते हुए अलमारी के दूसरे खाने से उसने साफ नए फलस्केप कागजों के गट्ठर निकाले। स्याही, दो कलम, कुछ निब।

'सामान सभी मौजूद है, समझा ? केवल आदमी नहीं मिल रहा था।' फिर कुछ हताशभाव से बोला, 'आशा करता था पचा इन्सान बनेगा, मेरी हर चीज सभालेगा, पर वह जो बनकर तैयार हुआ है, मेरी आशाओं पर पानी फिर गया है।'

छवीरानी कहती, 'सोचा था, छुट्टी के दिनों में पवन घर पर रहेगा पर कहाँ, लड़का दिन-रात लिख रहा है। अरे ऐसा भी था लिखने का काम है बूढ़े के पास ?'

पवन नहीं बताता कि क्या लिखना है। उसने वचन दे रखा है।

जगन्नाथ ने कहा है, 'लोगों को एकदम छपी किताब ही दिखाऊँगा।'

अतएव 'कपट जुआ ओ युधिष्ठिर का मतिभ्रम' की नकल तैयार होने लगी। देर लगने का कारण था, डिक्टेशन देते वक्त रह-रहकर जगन्नाथ की इच्छा होती शब्द बदलने की। फिर भी पवन को अच्छा लग रहा था।

दुकान से जल्दी छुट्टी कराकर जगन्नाथ उसे अपने रिकशे पर बैठा झटपट घर आ जाता। यहाँ उसे गजा, लाई चिउड़ा, नारियल के लड्डू रोज खिलाता। हाथ-मुँह धोकर पवन खाता, उसके बाद गणेश और सरस्वती को स्मरण कर लिखने बैठता। उसकी लिखाई पर रोज मुग्ध हो जाता जगन्नाथ। कभी-कभी दुःख प्रकट करता, 'अगर तेरे जैसे मोती जगन्नाथ शाह बिखेर सकता रे...अब तक बाजार मेरी किताबों से भर जाता।'

मेहनताना पचीस, सुन्दर लिखाई के पचीस, दुकान से पचहत्तर...कुल मिलाकर पवन सवा सौ कमा रहा था।

सारा पैसा वह छवीरानी को दे देता।

शुरू शुरू म छवीरानी न कहा था बाप के हाथों म द उसका जन्म सार्थक होगा रे

पर रजनी लेने को तैयार नहीं हुआ.

रजनी बोला, 'अपनी कमाई माँ को देगा तो बेटे का जन्म सार्थक होगा। मुझे तो इसमे ही खुशी होगी। भगवान कर, मैं अपनी कमाई से खाता हुआ मरूँ।'

निर्दोष इच्छा। निर्मल प्रार्थना।

पर भगवान् नामक व्यक्ति ऐसी प्रार्थना सुनकर हँसता है। मनुष्य कहाँ जान पाता है ? तभी तो वह भविष्य के चित्र बनाता है।

रजनी सामन्त क्या अपने बेटे से ईर्ष्या करता है ? लडका जैसा काम चाहता था, वैसा ही पा गया है, इस बात की ईर्ष्या ?

नहीं, रजनी इतना नीच नही।

वह अपनी नीति पर स्थिर है आज भी। वह जानता है लडका बाप की जीविका से घृणा करता है, इसीलिए उसने बेटे को पसन्दीदा काम में लगा दिया है।

रजनी जानता है, जब तक उसमे शक्ति है वह अपना काम करता रहेगा। छवीरानी बेटे के रुपये लेकर जैसा चाहे वैसा करे। लड़के की शादी में धूमधाम करना चाहे करे, रजनी का इसी मे खुशी होगी।

रजनी लड़के को कोई दोष नही देता है।

इस युग के कितने लड़के बाप का पेशा अपनाते हैं ?

गाँव के पुरोहित साधन भट्टाचार्य, बूढा हिलने-डुलने से लाचार हो गया है। फिर भी सीधा बाँधता फिरता है, गले से नारायणशीला लटकाए इस गाँव से उस गाँव का चक्कर काटा करता है। तीन-तीन जवान बेटे हैं भट्टाचार्य के, एक ने भी बाप का पेशा नहीं अपनाया। एक करता है आर्डर सप्लाई का काम, एक सरकार के 'ग्रामोद्धार' की योजना की ट्रेनिंग ले रहा है और छोटा लॉरी चलाना सीखने के लिए जगह-जगह के चक्कर काट रहा है।

और मेज की बात तो यह है कि उसी सीधे बल पर गृहस्थी की गाड़ी चल रही है।

सत्यचरण की स्टेशन के पास वाली दुकान का भी वही हाल है। लड़का बाप की दुकान की तरफ नहीं फटकता है। कहता है हलवाई की दुकान पर बैठने में शर्म लगती है, इज्जत जाती है। सो एक इज्जतदार काम जुगाड़ कर लिया है, सिनेमा हॉल मे टिकट बेचता है।

किसकी-किसकी, बात की जाए ? कुम्हार, बढई, कृषक, माली जो चौदह पुश्तों से अपना पेशा ढोते चले आ रहे हैं, उनके ही लडके अब इन पेशों से नफरत करते हैं। कोई भी काम को करना नही चाहता है। इसी युग में एकाएक यह बात देखी जा रही है। कोई अपने बाप-दादा का पेशा अपनाने मे तैयार नही, वे लोग दूसरा व्यवसाय अपना रहे हैं, चाहे वह कारखाने की कुलीगिरी ही क्यो न हो।

हर कोई चाहता है पैजामा-पतलून पहनना, गले में रूमाल, कलाई पर घड़ी बाँध कर वे चाहते है फिल्मी सितारों की बातें करना।

रजनी ऐसे नमूने रात-दिन देखा करता है, कुछ लोग दिल का बोझ हल्का करने को अपना दुःखडा भी रो चुके है उसके आगे, इस सबसे पर हजार गुणा अच्छा है रजनी का बेटा। ऐसा दिखावा पवन में नहीं है पवन में कविभाव है, कोमल हृदय है, सीधा-साधा जीवन जीना चाहता है। इस बात को रजनी समझता है।

इसीलिए उसे पवन से कोई शिकायत नहीं।

अब तो पवन पहले-सा है भी नहीं।

अब नहीं कहता है कि 'मसालेदार लाई' बनाने का सामान नहीं लाऊँगा। हर हफ्ते रजनी को जो चाहिए होता है वह खुद दुकान से ले आता है।

रजनी पहले की तरह मसाले झाड़ता-बीनता है, दालों को धूप दिखाता है, डब्बे मॉज कर साफ करता है। दिन बीतते रहते हैं।

मातृमुखी पवन के किशोर मुख पर मूँछों की रेखा उभर आई। बेटा जवान हो गया। छवीरानी सुन्दर-सी एक बहू के सपने देखने लगी।

कभी-कभी बेटे की गैरहाजिरी पर रजनी जगन्नाथ की दुकान पर जा बैठता। पूछता, 'पवन कैसा काम कर रहा है ?'

खुश होकर जगन्नाथ कहता, 'आप लोग अच्छा कहेंगे तो अच्छा ही होगा।' उसके बाद जरा झिझकते हुए जानना चाहता, 'मालिक के घर पर कैसा काम करना पड़ता है ? जिसके लिए अलग से रुपये मिलते हैं।'

जगन्नाथ न पवन स मना कर दिया था कि वह किसी से बताए नहीं पवन ने अपने मा बाप को भी नही बताया है दखकर जगन्नाथ बडा खुश हुआ बडा इमानदार लडका है

जब रजनी जाने लगा जगन्नाथ ने उसे काफी खाली डिब्बे दे दिए।

दुकान पर विनोद बैठता, गोदाम मे रहता था पंचू। जब वे पवन की तारीफ सुनते तब ईर्ष्या से जल-भुन जाते। और जो दो मजदूर लौडे रहते थे उन्हें भी पवन के विरुद्ध भड़काया करते।

फिर यह तो स्वाभाविक ही है कि मालिक के प्रिय कर्मचारी से दूसरे जला करे। उसके विरुद्ध दूसरो को चढ़ाना कोई मुश्किल काम नहीं।

पवन का हर रोज जगन्नाथ के साथ रिक्शे पर बैठकर जाना उन्हें बहुत अखरता। वे पवन को बरबाद करने की योजना बनाने मे जुट गए। मौका तलाशने लगे।

इधर जगन्नाथ के घर में भी वही हाल था। मानदा यह जानने को परेशान थी कि जगन्नाथ उस लौडे को लेकर बन्द कमरे में क्या करता है। पर जगन्नाथ मौका ही नहीं देता था।

जगन्नाथ बन्द दरवाजे के सामने दुनिया भर की गन्दगी और फटे जूते रख देता। फटी-फटी आवाज ने चिल्लाती मानदा, 'मैं पूछती हूँ किसने पर कूड़ा यहाँ रखा है ?'

जगन्नाथ हमेशा को तरह कहता, 'तुम्हारा यम।'

यह अपमान मानदा कहाँ तक सहे ?

पवन को गालियाँ देती। पवन चौंक उठता तो जगन्नाथ कहता, 'उधर ध्यान मत दे, वह तो पागल है।'

पागल नहीं तो क्या कहा जा सकता है ? वरना पत्नी पति के लिए खाना नहीं बनाती है, सुना है किसी ने ? जब नहा-धोकर जगन्नाथ खाने पहुँचता वह कह देती, 'आज सब छूत हो गया है, सात-सात बार नहाया है, खाना नहीं बना है। तुम लाई निकाल लो, और कच्चे दूध में केला मसल कर खा लो।'

जगन्नाथ चुपचाप निर्देश का पालन करता।

कभी-कभी मानदा कहती, 'नए गुड की भेली है, लें लों।' जगन्नाथ अनसुनी कर देता।

पर मानदा ने हनुमान की तरह लंका दहन किया।

अपना ही घर जलाया।

इधर पवन जगन्नाथ का दाहिना हाथ बन बैठा। वह उसे लेकर शहर जाता बाजार करने। रुपयों की गड्डी उसे रखने को देता, चीज खरीदता तो हिसाब नहीं लेता।

पर यह सब क्या उसके मुक्ताक्षरों के कारण ? असल में जगन्नाथ ने इससे पहले ईमादार इन्सान नही देखा था।

पचू को एक रुपये की चीज लाने को दो तो पॉच आना चुरा लेता है और विनोद के सामने रुपया ? बिल्ली के सामने मछली के समान है। हर जगह यही होता है। पर पवन को जब भी उसने मिठाई खाने के लिए पैसे दिए हैं फौरन लौटाते हुए कहता, 'अरे, अभी घर जाकर तो खाना खाऊँगा।'

पर ऐसे लोगों के लिए दुनिया मे जगह कहॉ है ?

जगह हुई भी नहीं।

न होने की पृष्ठभूमि थी।

जो मानदा गन्दगी के डर से पंचू के घर के सामने नही जाती थी वही मानदा जाकर उसके घर के ऑगन में खडी हुई। हालॉकि घाट पर नहाने जाने से पहले। फिर भी, गई तो।

पचू की मॉ को आश्चर्य हुआ। कुछ चिन्तित हुई, सोचा किस मतलब से आई है ? खैर मन में कुछ भी सोचे, सामने तो जल्दी से बढ़ आई, 'दीदी ? आओ आओ। आज हमारे भाग्य जागे है। आओ अन्दर आकर बैठो।'

दीदी नाक सिकोड़ कर बोलीं, 'बैठने का समय नहीं है पर पंचू की हितैषी हूँ, इसीलिए आई हूँ। क्या पंचू घर पर नहीं है ?'

पचू की मॉ बोली, 'है, अभी सो रहा है। कोई काम है क्या दीदी ?'

मानदा चिल्लाकर बोली, 'तेरा बेटा सोता ही रहे, उधर सब कुछ लुट जाएगा। मैं पूछती हूँ एक फालतू लौंडा तेरे जेठ की ऑखो का तारा बन बैठा है, यह देखा है ? रोज शाम को उसके साथ खुसर-पुसुर...घर बन्द कर के छुट्टी के दिन लिखना-पढ़ना...यम जाने यह सब क्या है। मैं कहती हूँ जरूर उस लौंडे के नाम सब कुछ लिखे-पढ़े दे रहा है पंचू का ताऊ मुझे तो लग रहा है लड़की-दामाद

भी वाचित रहे तब हम सिर पीटकर रह जाएंगे पचा ताऊ की सम्पत्ति पाएगा सोचकर मेरा भाई अपनी लडकी लिये बैठा है अगर उस लौंडे ने सब हथिया लिया तो क्या होगा ?

पचा ताई की चीख-पुकार सुनकर उठ बैठा था। अब बाहर आकर ताई की बात सुनी। ताई को रास्ते पर आया देख उसका उत्साह बढ़ गया।

उसके बाद धीमी आवाज में सलाह-मशविरा हुआ। मानदा छलांग लगा-लगाकर ऑगन पार कर चली गई और जाते-जाते कहती गई, 'जड से उखाड़ फेंकना ही ठीक होगा।'

दो-एक दिन बाद ही रंगमंच पर एक नाटक शुरू हुआ। न जाने कहॉ से मानदा की दूर के रिश्ते की एक भाँजी आ टपकी। बालविधवा, अत्यन्त कम उम्र की युवती, साज पोशाक में चटख और चाल-चलने मे विशेष सुविधाजनक नहीं।

मानदा ने बडे सम्मान से घर मे रखा।

उसे देखकर जगन्नाथ का जी जल उठा, 'तुम्हारे शरीर को क्या हुआ, जो सेवा करने वाली चाहिए ?'

मानदा उसके लिए तैयार थी, खनकती आवाज में बोली, 'ऑख हो तो दिखाई दे। कहॉ का कौन एक लौंडा, रात दिन उसे लेकर मस्त रहते हो, मेरे अन्दर क्या हो रहा है यह तो मैं ही जानती हूॅ।'

जगन्नाथ मुॅह बिगाड़ कर बोला, 'तेरे हाथ-पाँव सिर्फ गल रहे हैं और कुछ नहीं...दिन-रात पानी में पड़ी रहती है...तो इस भांजी से करवाएगी अपना इलाज ?'

मानदा उसके बाद भी खूब चिल्लाती रही। उसके चिल्लाने का सारार्थ से था कि पैसेवाले आदमी की ब्याहता होकर तो उसे बड़ा सुख मिल रहा है। दोनो वक्त खाना पकाते-पकाते मरी जा रही हूॅ। भांजी आकर खाना बनाकर खिलाएगी तो जगन्नाथ को बुरा क्यों लग रहा है ? वीना क्या उसका कुछ उठा ले जाएगी ? जगन्नाथ क्या एक अनाथ विधवा को दो-दस दिन खिला नहीं सकता है ?

बिगड़कर जगन्नाथ बोला, 'रख बाबा रख, अपनी इस नखरेबाज भांजी को, लेकिन कहे देता हूॅ मेरे सामने बाल खोलकर, धोती फैशन से पहन कर न आए।'

अतएव वीना रह गइ।

खटने की क्षमता तो थी ही, काम करने बाद भी पान चबाती, गाना गाती और बाल पीठ पीर फैलाए घूमा करती।

जगन्नाथ उसकी तरफ ऑख उठाकर भी नहीं देखता पर इतना ध्यान था कि अब दोनों वक्त ढंग का खाना मिल रहा था। वीना खाना अच्छा बनाती थी। फिर, अब जगन्नाथ को नहाते वक्त सरसो के तेल की कटोरी नही ढूँढनी पडती थी, नहाने के बाद फिची धोती, धूप से लौटो तो पंखा, खाने के बाद पनडिब्बा, मिल जाता था।

पुरुष सेवा, शृखला और शान्ति के वश में होना पसन्द करता था, ये तीनो चीजे मिल रही थीं। मानदा भी अब हर वक्त चिल्लाया नही करती हैं कयोकि उसे कोई काम ही नहीं करना पड़ता है। उसके जो जी में आता करती फिरती।

यह था नाटक का पहला अक। उसके बाद का दृश्य इस प्रकार था। मानदा जगन्नाथ के पास आकर दबी आवाज कहते पाई गई, 'देखो तुम्हें साफ-साफ कहे दे रही हूँ, तुम्हारे इस प्यारे छोकरे के रीति-चरित कुछ ठीक नही, जब देखो तब वीना की तरफ कुदृष्टि....

'क्या ? क्या कह रही है ? जगन्नाथ शेर-सा दहाड़ उठा, 'तू लडके की उम्र कितनी है जानती है ? और इस साड़नी की ?

मुँह बनाकर मानदा बोली, 'मुझे जानने की जरूरत नहीं है। मर्द तो मूँछ निकलते ही जवान हो जाता है। फिर अगर चरित खराब हो तो उम्र क्या कहना ? मैं तो कह रही हूँ वह इसी उम्र में खराब हो चुका है।'

जगन्नाथ सुनकर मारने दौड़ा, 'सरकार, फिर यह बात सुनी तो तेरा मुँह सिल दूँगा।'

मानदा इस धमकी से नहीं डरी। हाथ-मुँह नचाकर बोली, 'मेरा सिलना तुम्हारे हाथ में है, लेकिन सिल सकोगे औरो का मुँह ? न हो तो अपने भाई की बहू से पूछ लो, उसने देखा है या नही लौंडे को औरतो वाले पोखरे के किनारे पेड़ के पीछे छिपते।'

जगन्नाथ एक लकडी उठाकर बोला, 'मै यह बात छोटे भाई की बहू से पूछूँगा ? जा निकल मेरे सामने से। और निकाल बाहर कर अपनी भाजी को।'

लेकिन द्वितीय अंक में जो दृश्य सामने आया उसमें जगन्नाथ गम्भीर दिखाई दिया पवन से उसने पूछा 'तू गोदाम में जाते वक्त सीधे रास्ते से न जाकर पोखरे की तरफ से क्यों जाता है ?'

पवन ने सोचा भी नहीं था कि यह सवाल भी कोई पूछ सकता है, इसीलिए आश्चर्य से बोला, 'जाने से क्या होता है ?'

'क्या होता है यह बात नहीं है, जाता है कि नहीं यह बता।'

पवन धीरे से बोला, 'जाता हूँ।'

उधर बूढ़े वटवृक्ष के आसपास कितनी स्मृतियाँ फैली बिखरी हैं यह बताते पवन को शर्म आई।

इसीलिए बोला, 'इधर से शॉककट होता है।'

'इधर से शॉकट होता है, मुझे बच्चा समझ रखा है ? इधर का रास्ता ज्यादा है तो कम नहीं। कहे दे रहा हूँ अपनी बुद्धि भ्रष्ट मत कर—सावधान कर रहा हूँ।'

बुद्धिभ्रष्ट के अर्थ पवन नहीं समझ सका, पर दिमाग गरम हो गया। चुपचाप काम करता रहा। कुछ पूछने पर संक्षेप में जवाब दे देता।

जगन्नाथ उसके गम्भीर चेहरे की तरफ देखकर सोचने लगा, मानदा ने ठीक ही कहा था, लड़का अब बालक नहीं रह गया है। मर्द मूँछ निकलते ही जवान हो जाता है।

नाटक के तृतीय अंक का दृश्य और भी उत्तेजक था। शहर से लेन-देन कर के जगन्नाथ थका-हारा घर में घुसा। देखता क्या है कि पवन उसके कमरे में तख्त पर बैठा है चुपचाप। जैसे किसी की प्रतीक्षा कर रहा हो। मालिक को देखकर जल्दी से उठ खड़ा हुआ।

'तुम गोदाम छोड़कर यहाँ क्या कर रहे हो ?'

हुंकार उठा जगन्नाथ।

पवन इस हुंकार के लिए प्रस्तुत नहीं था, हड़बड़ा कर बोला, 'आपने... आपने ही तो...'

'मैंने ? मैंने माने ? मैंने क्या ?'

पवन जरा सभलकर बोला, 'मैं क्या यूँ ही आया हूँ ? मुझे आपने बुलावा भेजा था।'

'मैंने ? मैंने तुझे बुला भेजा था ?' गुस्से से आग-बबूला हो गया जगन्नाथ, मुझे पट्टी पढ़ा रहा है मैंने बुलाया है ? हरामजादे, बता जरा किससे बुलावाया था तुझे ?'

हरामजादा !

पवन के लिए जगन्नाथ के मुँह से ऐसी भाषा ? स्तब्ध खडा देखता रह गया।

गुस्से और भूख से जगन्नाथ उस समय पागल-सा हो रहा था। अब जगन्नाथ अनुमान लगा सकता है कि एकाएक हाल में उसका छोटा भाई विश्वनाथ क्यो पास आकर बोला था, 'भइया, तुम्हारे घर में वह जो लड़की है वह कौन है ?'

भौहें सिकोड़कर जगन्नाथ ने कहा था, 'तेरी भौजाई की भांजी है। क्यों ? उसे क्या हुआ ?'

'नहीं, कुछ नही।' कहकर कुछ झिझकते हुए कहा, 'वह लड़की अच्छी नहीं है। खैर तुम भाभी से मत कह देना।'

जगन्नाथ ने उसे छोड़ा नहीं, भाई से पूछताछ की। जैसे लाचार होकर विश्वनाथ को बताना पड़ा कि उस दिन रसोई घर के पिछवाड़े पवन के साथ उसे खुसुर-फुसुर करते देखा था। हाव-भाव कुछ अच्छे नहीं लगे।

जगन्नाथ को इस समय वही बात याद आई गई। कड़क पर अपनी तरफ आश्चर्य से देखते पवन से बोला 'गाय चोर की तरह क्या देख रहा है ? कुछ समझ मे नहीं आ रहा है न ? काम छोड़कर क्यों आया है, मैं अच्छी तरह जानता हूँ। जा निकल यहाँ से—अब मेरी कॉपी की नकल करने के लिए तुझे आने की जरूरत नहीं है।'

इसके बाद खड़ा रहे पवन ऐसा लडका नहीं। उसने भी तेज होकर कहा, 'ठीक है, फिर कभी नहीं आऊँगा। मैं अपने आप आया भी नहीं था। पंचा से बुलवा भेजा था। तभी—'

पॉव पटकता हुआ वह चला गया।

लेकिन जगन्नाथ भी चुप रहने वाला आदमी नहीं। उसके साथ हो लिया, 'चल अभी, तेरे साथ चलता हूँ। तेरे सिखाने-पढ़ाने से पहले ही पंचा से चलकर पूछता हूँ।'

परन्तु पचा क्या पवन के पक्ष में बोलने लगा ? पचा सुनकर आसमान से गिरा, 'मैं ? मैंने पवन से कहा था कि तुमने बुलाया है ?'

बिगड़कर पवन बोला, 'तु क्या दिन-दहाडे सपना देख रहा है ? अक्सर ही तो दोपहर में गोदाम छोड़कर चला जाता है, मुझसे कहता है, पंचू भाई जरा देखना—'

प्रायः।

'मैं अक्सर दोपहर को चला जाता हूॅ ?'

'नहीं जाता है ? खुशामद करके कहता नहीं है, गया और आया, तू ताऊ से मत बताना।'

पवन का चेहरा लाल हो गया। कॉपती आवाज में बोला, 'झूठा कहीं का।

लेकिन जगन्नाथ की मानसिक अवस्था ऐसी थी कि उसने पवन की कॉपती आवाज का सही अर्थ नहीं समझा। इसीलिए ठायँ से उसके लाल पड़े चेहरे पर एक थप्पड जडते हुए ऊँची आवाज में बोला, 'कौन झूठा है मुझे इस बात का पता चल गया है। तुझ पर मैंने ईश्वर की तरह विश्वास किया था, तूने अच्छा बदला चुकाया—'

कहते हुए मुँह घुमाकर चल दिया जगन्नाथ।

खूब तेज चलना होगा, इनकी नजरों के आड़ होने से पहले आँखें भी तो नहीं पोंछ सकेगा वह।

बात विश्वसनीय तो नहीं, फिर भी अविश्वास करते नहीं बन रहा था।

जगन्नाथ ने आशा से एक मंदिर बनाया था जो प्रबल तूफान ने ढहा दिया।

चरित्र पर सन्देह, बहुत बडी बात होती है। क्षण भर में सारे विश्वास की जड़ उखाड़ फेंकता है।

गृहस्थ तो क्या, तरुण, किशोर, प्रौढ़, साधू-संन्यासी तक इससे मुक्त नहीं। गलती से भी कोई दो बूँद स्याही छिड़क देता है या कि जान-बूझकर, बस सारा विश्वास, मान-सम्मान सब खत्म।

नहीं, अब जगन्नाथ मानदा की बातों पर अविश्वास नहीं कर सकेगा। पवन नामक चमचमाती ऑखो वाले लड़के का कभी विश्वास नहीं कर सकेगा। तब जगन्नाथ रोए बगैर रह भी न सकेगा। इसीलिए घर न जाकर शीतला मंदिर के चबूतरे पर बैठकर फूट-फूट कर रोने लगा।

उसने पवन को हरामी कहा है, उसे चॉटा मारा है।

जीवन मे संचित वात्सल्य-रस इसी लड़के को केन्द्रित कर मधुर हो उठा था.. आज वही रस बालू पर बिखर गया।

छवीरानी ने पूछा, 'क्यो रे, अभी तक सो रहा है, दुकान पर नही जाएगा ?'

तकिए में मुँह छिपा कर पवन बोला, 'नहीं।'

'क्यों रे ? तबीयत ठीक नही है क्या ?'

'अरे, नहीं।'

'तो गुस्सा क्यों होता है ?'

गुस्से के मारे रो पड़ा पवन। बोला, 'तुम लोग कोई मुझे चैन से नहीं रहने दोगे क्या ?'

रजनी उस समय निकलने की तैयारी कर रहा था। छवीरानी ने जाकर उसे सारी बात बताई पर निश्चिन्त प्रकृति के रजनी ने इस बात को महत्त्व नही दिया।

बोला, 'कल डाँट-वाँट होगी, इसीलिए आज गुस्सा होकर बैठा है। कल रात नहीं देखा, कितना चुपा था ?'

जाते वक्त रजनी कहता गया, 'उसे तंग मत करना, मन ठीक रहेगा तो खुद जाएगा।'

लेकिन कहाँ ?

आज, कल परसों।

मन-मिजाज ठीक हुआ कहाँ ? जा कहाँ रहा है ? तब क्या मालिक के बुलावे की प्रतीक्षा में है ?

रजनी बोला, 'अच्छा, आज मै स्टेशन से लौटते वक्त पता करता आऊँगा कि क्या घटना घटी है।'

लेकिन रजनी को पता करने के लिए जाना नहीं पड़ा, बल्कि जगन्नाथ शाह के यहाँ से उसी को बुलाया भेजा गया था, उसके बेटे ने हजारों रुपये धीरे-धीरे चुराए है, अब पकड़ा गया है।

हाँ, पकड़ा गया है।

विनोद और पंचू के काम मे जरा भी त्रुटि नहीं थी। रजिस्टर और जमाराशि देखकर जगन्नाथ स्तब्ध रह गया। इधर तो वह एक पैसे का हिसाब

तक नहा मिलता था जगन्नाथ इतना भर पूछ लेता था ठीक से देख लिया है न ?

पवन ने उसी विश्वास का फायदा उठाया है।

जगन्नाथ ने भयंकर चेहरा बनाते हुए कहा, 'मैं तेरे लड़के से चक्की पिसवाता तब कहीं चैन पड़ता रजनी, लेकिन तेरी वजह से थाना-पुलिस नहीं कर रहा हूँ। कुपुत्र के कारण तू स्वयं जल-भुन रहा है, उस पर मैं क्या मारूँ तुझे ? पर हाँ, उसने मेरे साथ जो बेईमानी की है उसके लिए मैं कभी माफ नहीं करूँगा। कुत्ते से नुचवाऊँ तो भी मेरा गुस्सा नहीं उतरेगा। पर तुझे यह रुपया भरना होगा। तू लड़के से ये चोरी का धन निकलवा।'

न दिया तो ?

न दिया तो पुलिस के हवाले।

प्रस्ताव जगन्नाथ शाह की दया का प्रतीक था। चाहता तो वह अभी जेल में डाल सकता था पवन को।

लेकिन कितना रुपया ?

जगन्नाथ के लिए कुछ नहीं लेकिन रजनी सामन्त के लिए यह रकम बहुत थी। साढ़े तीन हजार रुपये।

लडके की शादी के नाम पर छवीरानी ने उसकी तनख्वाह का जो रुपया इकट्ठा किया था, वह भी कम था। अन्त में, 'छवीरानी के सारे गहने, कान के फूल, नथूनी, गले का हार, बाजूबन्ध सब पोद्दार सुनार की दुकान मे जा पहुँचा। सोने का दाम ज्यादा था इसीलिए इससे कुछ मिल गया। कुछ रुपये उधर लिया।

जगन्नाथ के आगे रुपये रखकर निराश हुआ। इसके मतलब रुपये लिये थे वरना एक लाई-चना बेचने वाला तीन ही दिन में इतना रुपया देता कैसे ?

फिर यह रुपया तो जगन्नाथ का ही था। वह क्या अपनी नोट नहीं पहचानता है ? यह लगा तो है किसी-किसी नोट पर उसके हाथ का लगाया सिन्दूर।

हर महीने लोहे के सन्दूक पर सिन्दूर का टीका लगाता था जगन्नाथ और बोहनी के पहले रुपये पर भी। यही वह रुपये हैं।

वह भूल ही गया कि कितनी दफा तन्ख्वाह मे यह रुपये वह पवन को दे चुका था और छवीरानी लक्ष्मी समझ कर देवता के नीचे रख देती थी।

रुपये गिन कर देखने के बाद दहाड उठा जगन्नाथ, जा निकल जा यहाँ से। तू या तेरा लड़का इस रास्ते दिखाई दिया तो कुत्तो से नुचवाऊँगा।

जगन्नाथ ने कहा था रजनी से।

रजनी ने निभाया था वादा। दुसरे ही दिन निभाया था। डगमगाता हुआ जल्दी-जल्दी जब मसालेदार लाई का बक्स लेकर रेल पर चढ़ रहा था, पॉव फिसल जाने से पॉव ही गवॉ बैठा।

सिर्फ़ जगन्नाथ का रास्ता क्यों अभिमानी रजनी किसी भी रास्ते पर फिर नही चला।

बनावटी कहानी-सी लगने पर भी ऐसी घटना घटती है। जब मुसीबत आती है तव छप्पर फाड़कर ही आती है। इसीलिए रजनी के पॉव टूटने की खबर पाकर उसका बूढा बाप भागा-भागा आया और यहॉ आकर ऐसा बीमार पड़ा कि फिर वापस नहीं जा सका।

अब सारी गृहस्थी का बोझ पवन पर आ पडा। उसे ही इनका इलाज करवाना था, दोनो वक्त की रोटी जुटानी थी।

तीन महीने बाद रजनी अस्पताल से लौटा। देखा, बाप सौतेली बहन के पास लौट जाने को तैयार नहीं है। लड़का बीमार हुआ तो उसे बहाना मिल गया। परन्तु इनके ये दुःसह दिन कैसे कटें ?

छवीरानी अब क्या करे ? पड़ोस के घर-घर के वह उधर ले चुकी थी, अव उसके पास नही जा सकती है।

पवन छटपटाया करता।

परन्तु यहाँ महेशतला मे उसे नौकरी नही मिल सकती थी। पंचू और उसके साथियों ने पवन की बेईमानी और जगन्नाथ की उदारता का किस्सा सारे गॉव में बढ़-चढ़ा कर सुना रखा था।

किसी भी दुकान पर जाता तो वे सावधान हो जाते। चोर और चरित्रहीन पर कोई विश्वास नहीं करता है।

हार कर एक दिन पवन मनतोश के पास जा पहुँचा, बोला, 'मुझे अपना इतिहास सुनाना नही है, आप लोग सब सुन चुके हैं। मुझे सिर्फ इतना कहना है कि कभी आप मुझे 'मित्र-घ्र' कहते थे आज उसी के नाम पर मदद मॉगने आया हूँ। दो दिन से मेरे बीमार बाप, बूढ़े दादा और मॉ ने कुछ खाया नहीं है।'

कहा हा कह सका वह।

इन्सान मजबूरी मे शायद बहुत कुछ कर सकता ह

दोस्त को भी तू न कहकर आप सम्बोधित करता है।

मनतोष पाट टू की परीक्षा देकर घर बैठा था।

पवन का सारा किस्सा बिस्तार से सुन चुका था।

जगन्नाथ शाह का कैशबाक्स तोड़ने पर वह जितना विचलित नहीं हुआ था, उतना ही विचलित हुआ था जगन्नाथ पत्नी की भांजी की घटना पर।

इसीलिए पवन को देखते ही स्कूल मास्टर परितोष के बेटे मनतोष का खून खौल उठा।

उसने पवन के चेहरे पर चरित्रिक पतन के समस्त चिह्न मौजूद पाए। आँखों के नीचे स्याह निशान, गाल पिचके और वही गोरा रंग मानो जल गया था।

मनतोष ने घृणा से भरकर मुँह फेरते हुए कहा, 'मदद माँगने के लिए आते तुझे शर्म नहीं आई पवन ? हाँ, शर्म आएगी भला ? शर्म-हया होती तो ऐसा काम करता ? जगन्नाथ शाह की दुकान पर सुना था तुझे मोटी तरख्वाह मिलती थी, वह भी तुझे बेटे की तरह प्यार करता था ? नहीं...यह मदद-वदद नहीं कर सकूँगा।'

फिर भी पवन बोला, 'पाँच रुपया भी मिल जाता तो कम-से-कम दो आदमियों की जान बच जाती।'

कड़ककर मनतोष बोला, 'पाँच पैसा भी नहीं, ऑन प्रिंसिपल नही दूँगा। तुमने अपनी गलती से संसार की सहानुभूति खो दी है, समझे पवन ? मँझली दीदी, लड़के की छुट्टी होने पर आई थी, तेरी बात सुनकर घृणा से ..'

सहसा मनतोष को चुप होना पड़ा।

वही मँझली दीदी अन्दर से बैठक में आ गई। गम्भीर भाव से बोलीं, 'मनु रहने दे उन बातों को. पवन से कहो, कभी मैंने उसका नुकसान किया था, मैं उसके बदले में उसे कुछ दूँगी, उससे रुकने को कहो।' मँझली दीदी फिर भीतर चली गई।

उसने रुकने को कहो।

पवन से खुद नही बोल सकी ? तो क्या पवन इनके यहॉ की मेज-कुर्सियॉ उठा-उठा कर तोड डाले ? या कि जोर से चिल्ला उठे ? चिल्ला-चिल्ला कर कहे, 'ओह ! चोर से घृणा ? तुम खुद क्या हो ? चोर नहीं हो ? चोर हो, तुम चोर हो तुमने पवन की कॉपी चुराई है।'

नही, पवन से यह सब कुछ नही हुआ। वह कमरे से धीरे-धीरे बाहर चला गया। मनतोष बोला उठा, 'मॅझली दीदी कह गई है..'

वह बात हवा में विलीन हो गई।

कल्पना एक मुट्ठी नोट लेकर वापस आई। वड़े घर की बहू, आजकल मायके आती है तो अपने साथ ढेरो रुपया लाती है। कल्पना को शक था कि पवन शायद ही रुके, इसीलिए जल्दी से वापस आई।

उसने भी पवन की धँसी आँखें, पिचके गाल, गले की निकली हुई हड्डी और काला पड़ गया रग देखा था। फिर भी कल्पना को लगा था कि वह रुकेगा नहीं चला जाएगा

कमरे में घुसते ही उसने पूछा, 'चला गया ?'

कन्धे उचका कर मनतोष बोला, 'ऐसा ही तो देख रहा हूँ।'

'तुझको बताकर गया था ?'

'मैंने कहा था, लेकिन शायद तेरे सामने खड़े होने की हिम्मत नहीं हुई हो।'

'कह रहा था घर में किसी ने खाया नहीं है।'

'ओह तूने भी सुना था ? चोर-उचक्के ऐसा ही कहा करते हैं। छोड़ मँझली दीदी...कुपात्र पर दया दिखाने की जरूरत नहीं।'

फिर भी कल्पना बोली, 'क्यो ? दौड़कर देने जाएगी क्या ?'

कल्पना बोली, 'बेकार की बाते मत कर। सोच रही हूँ, किसी के जरिए अगर..'

'मॅझली दीदी, कह दिया कुपात्र पर दया मत दिखा। देखा नहीं नशेडियों जैसा लग रहा था। तूने तो सारा किस्सा भी सुना है।'

हाँ, सुना क्यो नहीं था, सब कुछ सुना था। शर्म और घृणा से सिर झुक गया था। फिर भी उसका मुँह देखकर—

पर पवन का उतरा मुह दखकर किसा क मन मे ममता कहा पदा हो रही था ? उसका बाप तो उसे देखते हा विष उगलने लगता हे दखते हा दस बात सुनाने लगता है जा लडका बदमाशी करके मान इज्जत, कमाई सब गवाँ दे उस पर कौन बाप सहानुभुति बरसाएगा ? दादा इन बातों को जानता नहीं था, उसे तो बस एक ही बात समझ में आती वह हे पेट की भूख। भूख लगते ही जवान पोते को गाली देना शुरू कर देता है। अपने आप बडबड़ाने लगता है, कहाँ मुझे खिलाओगे, पिलाओगे, सो नहीं। इतने दिन तो यहाँ था नहीं, दूसरे का खाता-पहनता रहा। अब ज्यों ही आया चूल्हा जलाना बन्द कर दिया ? मैं पूछता हूँ इतने दिनों तब क्या बिना खाए-पिए जिन्दा थे ?'

रजनी सामन्त को अस्पताल से दो क्रैंच मिले थे, उन्ही के सहारे तख्त से उतर कर कमरे से बाहर निकलकर चिल्लाना शुरू कर दिया।

'राजपुत्र इतने सम्मानी है कि दोबारा उधर का रुख न कर सके। मेरी क्षमता बरकरार होती तो जाकर पॉव पकड़ता. कहता इस बार गलती हो गई है, माफ कर दीजिए, फिर दोबारा ऐसा नहीं होगा।'

यह बात छवीरानी ने सुनी तो बाहर निकल आई। आजकल देखने में वह भूतनी-सी लगती है, पर आवाज में कोई फर्क नहीं पडा है। बोली, 'बेकार में ऐसी बातें क्यों करते हो ? उसने कभी भी ऐसे बुरे काम नहा किए हैं। जिन्होने दुश्मनी कर उसके नाम झूटा अपवाद लगाकर उसकी नौकरी खाई है उन्हे नरक मे भी जगह नहीं मिलेगी। उनका मेरा जैसा हाल हो, परोसी थाली में राख पड़े।'

रजनी बोला. 'ओह, तेरा बेटा धर्मपुत्र युधिष्ठर है, 'क्यो ?'

छवीरानी ने ऑख उठाकर अपने सदा प्रसन्न हँसते रहने वाले पति की ओर देखा फिर स्थिर स्वरों मे बोली, 'हॉ। मुझे पूरा विश्वास है कि वह धर्मपुत्र है।'

रजनी चुप हो रहा। उस वक्त चुप ही रहा।

पर ज्यो ही पेट में जलन होती, याद आ जाता, जो कुछ था सब इसी लड़के की वजह से जगन्नाथ को देना पड़ा है, और टूटे दिल से रेल पर चढ़ने लगा था जब—

वह छवीरानी के विश्वास पर भरोसा नहीं कर पाता है। शुरू कर देता है गालियाँ देना।

कौन जानता था रजनी को ऐसी गालियाँ भी आती हैं। शायद वह स्वय भी नहीं जानता था। अब उसकी इस दशा ने सब कुछ सिखा दिया है। अभाव ही इन्सान का स्वभाव नष्ट करता है।

एक-एक दफा कह बैठता है, 'ऐ पवन की माँ, तू एक बार जा। बुढ्डे का हाथ-पाँव पकड़। जाकर कह, खाने को कुछ नही है, दाल चावल उधार मे दे दे, दिन फिरे तो चुका दूँगा।

छवीरानी कहती, 'मुझे तुम काटकर टुकडे-टुकडे कर डालो तब भी मैं नही जाऊँगी।'

'पति-ससुर खाए बिना मरे तब भी इज्जत लिये बैठी रहेगी ?'

धीरे से छवीरानी बोली, 'तुमसे ही तो जीवन भर यही शिक्षा पाती रही हूँ। आज तुम्हारे पैर चले गए है लेकिन मन...'

छवीरानी अपनी बात पूरी न कर सकी।

रजनी सामन्त सहसा सामने की दीवाल से सिर कूटने लगा। बोला, 'मै जानवर बन गया हूँ छवी, जानवर बन गया हूँ। भाग्य का परिहास देखो, इन्ही दिनों पिताजी भी रहने आ गए। बूढा बाप भूखा-प्यासा छटपटा रहा है। बार-बार लोटा-लोटा पानी पी रहे हैं ? मुझसे देखा नहीं जाता है। घर मे क्या लोटा, कटोरी, पीतल, कॉसे का कुछ भी नही है ? रहे तो वही बेच दे, उनके रहने से फायदा ?'

इतने दु:ख मे भी छवीरानी हँस दी, 'रहने की बात क्या कर रही हो। ये छह-सात महीने किस तरह से चल रहा है...'

रजनी का बाप भीतर से चिल्लाया, 'दोनों मिया-बीबी खूब हँस-हँस कर बाते कर रहे हो...कोई सलाह क्यो नहीं करे हो ? ये घर मेरा है। अगर मै कहूँ यह घर बेच दूँगा तो तुम क्या कर लोगे ?'

दरिद्रता इन्सान को कीचड़ मे उतारती है।

छवीरानी ने ससुर होने का ख्याल नहीं किया। आगे बढ़कर बोली, 'बेच दीजिए न। आपका घर है, बेच दीजिए। कोई मना नही कर रहा है। बुलाइए ग्राहक, दर-भाव कीजिए। जैसे उस दफा दुकान बेच-बचा कर पहली पत्नी की बेटी के यहाँ चले गए थे इस बार भी वही कीजिए।'

रजना बाली, 'आ क्या कर रही हो ?'

छबीरानी बोली, 'होगा क्या, अब यही होगा। मुझसे अब यह सब सहा नहीं जाता है।'

रजनी चुप हो गया। रजनी सोचने लगा, हमारे उपवास के पीछे छबीरानी के और भी अधिक उपवासों के दिन छिपे हैं।

रजनी भीतर चला गया। आँखे बन्द करके एक दृश्य सोचने लगा, चलती ट्रेन पर एक आदमी कूदकर घुस आता है फिर चिल्लाने लगा, 'मसालेदार लाई ! मसालेदार लाई ! आइए, खाइए, जवान, बच्चा बूढ़ा और लुगाई।'

आज उसे विश्वास नहीं आता है, उस दृश्य का नायक वही था।

है ही कितनी पुरानी बात ?

अँगुली पर गिनूँ तो साढ़े छह महीने पहले की। अभी भी कानो में इमामदिस्ते की आवाज टकराया करती है या कि रजनी के हृदय की धडकन है ? और वह घुँघरुओं की आवाज ? उसकी आवाज भीतरी सुन रहा है वह ?

घुँघरू !

हाँ वे घुँघरूँ तो अभी भी रखे हैं। भारी-भारी पीतल के घुँघरू। पीतल महँगा है। कहाँ गई छबीरानी ? कहे, है तो घुँघरू, तू ने फिर क्यों कहा कि घर में कुछ नहीं है ?'

पर है कहाँ छबीरानी ?

बेडा हटाकर कोई घुसा। और कौन जाएगा। वही गुणधर बेटा। रात दिन घूम रहा है, पर मजाल है कि मुट्ठी भर लाई लेकर घर में घुसता हो। आह ! कैसी अच्छी चीज है यह लाई ! हरिमती लाईवाली से हर महीने लाई लेता था वह। उसका नाम ध्यान आया तो सफेद चमेल के फूल की लाई का ढेर आँखो के आगे नाच उठा।

रजनी के पाँव कटने के तीन-चार रोज पहले आई थी हरिमती, एक टोकरी में कुछ गरम लाई उपहार स्वरूप लेकर। फिर नहीं आई कभी।

क्यो आती ? आता कौन है ?

सहानुभूति हमेशा देने की चीज तो है नहीं ?

अच्छा...क्या हरिमती का ख्याल आया है, इसीलिए वह उसकी आवाज भी सुन रहा है ? रजनी चिल्ला उठा, 'कौन ? कौन है बाहर ?'

छवीरानी ने कहा कौन होगा ? पवन आया है

'मुझे हरिमती के गले की आवाज सुनाई पड़ी है।' हताश भाव से रजनी बोला।

किसी तरह से घूँट निगलकर छवीरानी बोली, 'हाँ, हरिमती ननदजी भी आई है।'

'आई है ? सचमुच आई है ? क्यो आई है ?'

छवीरानी ने थूक गटका, क्यो क्या ? कोई क्या इन्सान के घर आता नही है। ?'

रजनी बोला, 'इन्सान के घर आता है, भिखारी के घर नहीं। क्यों आई है बताना तो जरा ? उसके पास मेरा कोई उधार है क्या ?'

छवीरानी धीरे से बोली, 'तुम्हारा उधार नहीं है। उधार किया है तुम्हारे बेटे ने।'

'उधार ? हरिमती के पास ?' रजनी बोल उठा, 'बुलाओ पवन को। कहो, घर मे अभी भी एक चीज है, हरिमती को दे दे। उसके बदले में लाई-लाई अगर—'

छवीरानी बोली, 'ऐसी कौन-सी चीज है ?'

रजनी बोला, 'बुलाओ पवन को, बताता हूँ...अरे पवन, देखना तो मेरे घुँघरुओं का जोड़ा कहाँ है ? नहीं, नहीं करके भी उसमें काफी पीतल है। वही दे दो हरिमती को। अब तो मै पहनुँगा नही।

रजनी ने दीर्घश्वास छोड़ा।

पवन उसके पास चला आया। बोला, 'उसे नहीं दिया जा सकेगा। कल से मैं उसे पहनूँगा।'

□□